मूल्य : 20/- पंजीकरण संख्या : UPMUL/2016/76974 डाक पंजीकरण संख्या : UP/GBD- 249/2020-2022

वर्ष : ५ अगस्त : २०२१, विक्रमी सम्वत् : २०७८ अंक : ७४
सृष्टि सम्वत् : १९६०८५३१२२, दयानन्दाब्द : १९८

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम् ।।

सत्य और ज्ञान से भरपूर आर्यसमाज नोएडा का मासिक मुखपत्र

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

"सा प्रथमा संस्कृतिर्विश्ववारा"

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि ऋतं वदिष्यामि सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्।।

ईश्वर का व्यापक ज्ञानस्वरूप पूज्य और सहज स्वभाव जानकर हम उसकी उपासना करें तथा जीवन में सदा सत्य का आचरण करें।

युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती
1824-1883 ईस्वी सन्
1881-1940 विक्रमी सम्वत्

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस
(पुण्यतिथि : 18 अगस्त)

पं इन्द्र विद्यावाचस्पति
(पुण्यतिथि : 23 अगस्त)

पं गंगा प्रसाद उपाध्याय
(पुण्यतिथि : 29 अगस्त)

सभी देशवासियों को स्वतंत्रता दिवस, श्रावणी पर्व और योगेश्वर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी की हार्दिक शुभकामनाएं

आर्यसमाज के दस नियम

सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

सब काम धर्मानुसार अर्थात सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्।।

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

संरक्षक
श्री आनंद चौहान, श्री सुधीर सिंघल
प्रधान
श्री शैलेन जगिया
प्रबंध संपादक
आर्य कै. अशोक गुलाटी
संपादक
आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार
सह संपादक
आचार्य ओमकार शास्त्री

प्रकाशक और मुद्रक
स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक डॉ. जयेन्द्र कुमार द्वारा वत्स ऑफसेट, मुद्दा हाऊस, सी-ब्लॉक, बारात घर, चौड़ा रघुनाथपुर, सेक्टर-22, नोएडा से मुद्रित एवं आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, गौतमबुद्धनगर से प्रकाशित किया।

पंजीकरण संख्या : UPMUL/2016/76974

घोषणा पत्र संख्या : 153/2016-17, Postal Registration No.- UP/GBD- 249/2020-2022
Date of Dispatch 12 Every Month

मूल्य

एक प्रति : 20/- वार्षिक : 250/-
पांच वर्ष : 1100/- आजीवन : 2500/-

विदेश में शुल्क : 3100/-

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	विषय	पृष्ठ
1.	संपादकीय : योगाभ्यास एवं प्राणायाम...	4
2.	सृष्टि का वास्तविक स्वरूप	5
3.	धर्मनिष्ठ महर्षि दयानन्द जी	6–7
4.	शिक्षा और विद्या! ...	8–9
5.	ईश्वर को यदि न जाना व पाया...	10–11
6.	श्रावण : यज्ञमयी नौका....	12
7.	कर्त्तव्यपालनम् (संस्कृत)	13
8.	महापुरुषों को नमन...	14–15
9.	जियो और जीने दो !!!	16
10.	धर्म क्या है... ?	19
11.	समाचार-सूचनाएं	24
12.	सुस्वास्थ्य : सजगता व सावधानी बच्चों...	26

पाठकवृंद : कृपया स्वयं समाज एवं राष्ट्र के उत्थान के लिए 'विश्ववारा संस्कृति' के आजीवन सदस्य बनकर जीवन पथ को पुष्पित, प्रफुल्लित और प्रमुदित करें। आपका चित्र पत्रिका में प्रकाशित होगा। आपके बहुमूल्य सुझावों का हम स्वागत करते हैं।

लेखकवृंद से अनुरोध है कि रचना मौलिक एवं अप्रकाशित हो, रचना का लेखन स्पष्ट और सुपाठ्य हो। दो प्रतियां उस रचनाकार को भेज दी जाएगी, जिनकी रचना प्रकाशित हुई है।

विज्ञापन दर

पिछला कवर पृष्ठ	:	10,000 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-2	:	7000 रुपये
कवर पृष्ठ नं.-3	:	5000 रुपये
पूरा पृष्ठ अंदर	:	2500 रुपये
आधा पृष्ठ अंदर	:	1500 रुपये

'विश्ववारा संस्कृति' में सभी पद अवैतनिक हैं। प्रकाशित विचारों से संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गौतमबुद्धनगर होगा।

संपादकीय कार्यालय
आर्य समाज, बी-69,
सेक्टर-33, नोएडा- 201301
गौतमबुद्धनगर, (उ.प्र.)
दूरभाष : 0120-2505731,
9871798221, 7011279734
9899349304
captakg21@yahoo.co.in

Web : www.noidaaryasamaj.org, E-mail : info.aryasamajnoida33@gmail.com

संपादकीय...

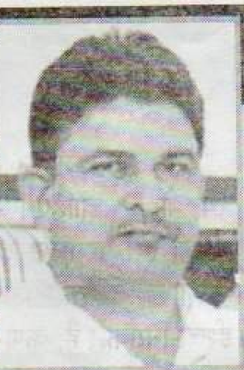

।।ओ३म्।।

योगाभ्यास एवं प्राणायाम स्वस्थ तन-मन

आज का युग विज्ञान का युग माना जाता है। वैज्ञानिकों ने विज्ञान की तरक्की के माध्यम से जीवन को सुविधायुक्त बना दिया है। दिन-प्रतिदिन हो रहे विज्ञान के आविष्कारों ने मनुष्यों को अनेक सुविधा प्रदान की है। दूसरी तरफ उसका दुष्परिणाम ये हुआ है कि व्यक्ति केवल भौतिकतावादी सोच में पूरी तरह डूबा हुआ है। आज का मनुष्य अपने सुख के लिए सभी साधन जुटाना चाहता है। उसकी इच्छाओं का कोई अंत नहीं दिखायी पड़ता। व्यक्ति का उद्देश्य उसके जीवन का माध्यम केवल अर्थोपार्जन ही हो गया है।

प्राण वह शक्ति है जो हमारे शरीर को जिंदा रखती है और हमारे मन को शक्ति देती है। तो 'प्राण' से हमारी जीवन शक्ति का उल्लेख होता है और 'आयाम' से नियमित करना। इसलिए प्राणायाम का अर्थ हुआ खुद की जीवन शक्ति को नियमित करना। प्राण शरीर की हजार सूक्ष्म ऊर्जा ग्रंथियों और ऊर्जा के केंद्रों से गुजरती है और शरीर के चारों ओर आभामंडल बनाती है। प्राणशक्ति की मात्रा और गुणवत्ता मनुष्यों की मनोस्थिति को निर्धारित करती है। अगर प्राणशक्ति बलवान है और उसका प्रवाह निरंतर और सुस्थिर है तो मन सुखी, शांत और उत्साहपूर्ण रहता है। पर ज्ञान के अभाव में और सांस पर ध्यान न रखने की वजह से मनुष्य की नाड़ियां, प्राण के प्रवाह में रुकावट पैदा कर सकती हैं। ऐसी स्थिति में मन में आशंका, चिंताएं, और डर उत्पन्न करती है। हर तकलीफ पहले सूक्ष्म में उत्पन्न होती है। इसलिए कोई बीमारी पहले प्राणशक्ति में उत्पन्न होती है।

विज्ञान का आविष्कार आवश्यक है किंतु देश की, समाज की, विश्व की बहुत उन्नति हुई सारी दुनिया बहुत छोटी हो गयी है। किंतु प्रकृति के अत्यंत दोहन से बाह्य समस्याएं भी बहुत तेजी से बढ़ी हैं। आजकल ब्लडप्रेशर, तनाव, शुगर, कोलस्ट्रॉल, मानसिक अवसाद की बीमारियां घर-घर में हो रही हैं। ऐसे में हम क्या करें, विज्ञान में बढ़ रही प्रतिस्पर्धा को रोकना अभी सम्भव नहीं दिखाई पड़ता है। ऐसे में व्यक्तिगत रूप से व्यक्ति को संभलने की आवश्यकता है। आप आसनों को अपनी आयु के अनुसार चुने तथा नियमित अभ्यास को आसनों में सर्पासन नियमित करना चाहिए। प्रातः-सायं भ्रमण करना चाहिए, प्राणायाम एक ऐसी वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिससे तन और मन को स्वस्थ रखा जा सकता है। प्राणायाम के माध्यम से मन को पूर्ण स्वस्थ रखा जा सकता है। प्राणायाम से मानसिक अवसाद से भी छुटकारा हो जाता है। तन-मन से स्वस्थ होने का मार्ग योग का मार्ग है।

■ **आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार**

प्राण वह शक्ति है जो हमारे शरीर को जिंदा रखती है और हमारे मन को शक्ति देती है। तो 'प्राण' से हमारी जीवन शक्ति का उल्लेख होता है और 'आयाम' से नियमित करना। इसलिए प्राणायाम का अर्थ हुआ खुद की जीवन शक्ति को नियमित करना। प्राण शरीर की हजार सूक्ष्म ऊर्जा ग्रंथियों और ऊर्जा के केंद्रों से गुजरती है और शरीर के चारों ओर आभामंडल बनाती है। प्राणशक्ति की मात्रा और गुणवत्ता मनुष्यों की मनोस्थिति को निर्धारित करती है। अगर प्राणशक्ति बलवान है और उसका प्रवाह निरंतर और सुस्थिर है तो मन सुखी, शांत और उत्साहपूर्ण रहता है। पर ज्ञान के अभाव में और सांस पर ध्यान न रखने की वजह से मनुष्य की नाड़ियां, प्राण के प्रवाह में रुकावट पैदा कर सकती हैं। ऐसी स्थिति में मन में आशंका, चिंताएं, और डर उत्पन्न करती है। हर तकलीफ पहले सूक्ष्म में उत्पन्न होती है। इसलिए कोई बीमारी पहले प्राणशक्ति में उत्पन्न होती है। विज्ञान का आविष्कार आवश्यक है किंतु देश की, समाज की, विश्व की बहुत उन्नति हुई सारी दुनिया बहुत छोटी हो गयी है। किंतु प्रकृति के अत्यंत दोहन से बाह्य समस्याएं भी बहुत तेजी से बढ़ी हैं। आजकल ब्लडप्रेशर, तनाव, शुगर, कोलस्ट्रॉल, मानसिक अवसाद की बीमारियां घर-घर में हो रही हैं। ऐसे में हम क्या करें, विज्ञान में बढ़ रही प्रतिस्पर्धा को रोकना अभी सम्भव नहीं दिखाई पड़ता है। ऐसे में व्यक्तिगत रूप से व्यक्ति को संभलने की आवश्यकता है। आप आसनों को अपनी आयु के अनुसार चुने तथा नियमित अभ्यास को आसनों में सर्पासन नियमित करना चाहिए। प्रातः-सायं भ्रमण करना चाहिए, प्राणायाम एक ऐसी वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिससे तन और मन को स्वस्थ रखा जा सकता है।

सृष्टि का वास्तविक स्वरूप

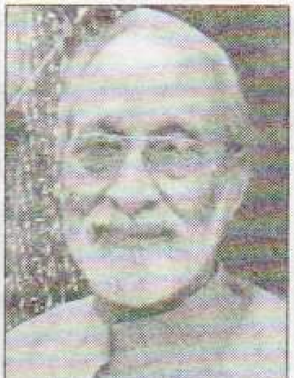

आर्य कै. अशोक गुलाटी
प्रबंध संपादक

मनुष्य को अपने जीवन में सदैव सत्य बोलना चाहिए। सत्य के द्वारा ही हम परमात्मा तथा तथा उसकी सृष्टि का वास्तविक स्वरूप समझ सकते हैं। ईश्वर निराकार है, कण-कण में व्यापक है। उसके वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए हमें सत्य का अनुशरण करना चाहिए।

उपनिषद में भी आया है- असतो मा सद्गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय।

उक्त वाक्य में यही प्रार्थना की गई है- हे परमात्मा!हमें असत् से दूर कर दो और श्रेष्ठ मार्ग पर चलाओ। साहित्यकारों ने लिखा है कि अज्ञानता बहुत बड़े दुखों का कारण है। जैसे- हिरन चमक के पीछे भाग रहा है वह चमक उसे तृप्ति नहीं दे सकती, ऐसे ही मनुष्य जिस चमक के पीछे दौड़ रहा है, वह उसकी शांति का कारण कभी नहीं बन पायेगी। यह चमक संसार के चकाचौंध, पदार्थ और आकर्षण मनुष्य को सत्य से भटकाते हैं। इसीलिए वेदरूपी ज्ञान गंगा में डुबकी लगाकर सत्य की खोज कर आनंद स्वरूप परमात्मा की उपासना करें। परमानन्द की प्राप्ति परमपिता परमात्मा के सानिध्य में ही जाकर प्राप्त होगी। यही मानव जीवन का मुख्य उद्देश्य है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के नियमों में 'सत्य' को अधिक महत्व दिया है। वह सत्य के लिए जिये व बलिदान हुए अनेक महापुरुषों ने सत्य को ही अधिक महत्व दिया है। एक बार अंग्रेज लार्ड नार्थब्रुक ने स्वामी जी से कहा कि आप अपने व्याख्यानों के प्रारम्भ में जो ईश्वर की प्रार्थना करते हैं, उसमें आप अंग्रेजी सरकार के कल्याण की प्रार्थना किया करें। स्वामी जी ने निर्भीकता से उत्तर दिया कि मेरी स्पष्ट मान्यता है कि राजनीतिक स्तर पर मेरे देशवासियों की निर्बाध प्रगति के लिए तथा संसार की सभ्य जातियों के समुदाय में भारत को सम्मानीय स्थान प्रदान करने के लिए ये अनिवार्य है कि मेरे देशवासियों को पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त हो, सर्व शक्तिशाली परमात्मा के समक्ष प्रतिदिन मैं यही प्रार्थना करता हूं कि मेरे देशवासी विदेशी सत्ता से शीघ्रताशीघ्र मुक्त हों। उनका कहना था कि चाहे कमिश्नर नाराज हो जाय, चाहे गर्वनर नाराज हो जाय, चाहे चक्रवर्ती राजा ही क्यों न हो हम तो सत्य ही कहेंगे! ये था सत्य का बल। अतः आर्य समाज के चतुर्थ नियम के नियमानुसार-सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए व पांचवें नियमानुसार- सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व प्रकृति के तीनों गुण एक संतुलन की स्थिति में शांत अवस्था में विद्यमान रहते हैं। किंतु अनादि काल में पुरुष की प्रकृति से निकटता के कारण ये तीन तत्व कम्पायमान अवस्था में आकर सृष्टि का निर्माण करने लगते हैं। इस दर्शन के अनुसार जब पुरुष अथवा शुद्ध चैतन्य, प्रकृति के इस नृत्य अथवा क्रीड़ा से स्वयं को तटस्थ कर स्वयं में लीन हो जाता है तब वह कैवल्य अथवा मोक्ष को प्राप्त कर लेता है। किंतु इन सभी परिकल्पनाओं तथा विचारों से अलग ऋग्वेद का नासदीय सूक्त सृष्टि के सृजन की समस्या को एक ऐसे अनोखे रूप में प्रस्तुत करता है कि सृष्टि की रचना के प्रश्न पर ही प्रश्न-चिह्न लग जाता है। नासदाय सूक्त के प्रथम सूत्र के अनुसार सृष्टि की रचना का प्रश्न सृष्टि की रचना से पहले उपस्थित तत्व के प्रश्न से अपरिहार्य रूप से जुड़ा हुआ है।

यदि सृष्टि की उत्पत्ति की समस्या को हम इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो सृष्टि प्रकरण से जुड़े सारे प्रश्न अपने मायने ही खोते हुए प्रतीत होने लगते हैं। सृष्टि के आरंभ से पहले किसी बिंदु की कल्पना सृष्टि की उत्पत्ति की अवधारणा को ही खंडित कर देती है। अतः सृष्टि के आरंभ की कल्पना का प्रश्न स्वयं में ही विरोधाभास से ग्रसित है तथा इन मायने में यह प्रश्न हमें केवल रहस्यीकृत ही कर सकता है, किंतु इस प्रश्न से जुड़ी हमारी जिज्ञासा को शान्त नहीं कर सकता।

सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व प्रकृति के तीनों गुण एक संतुलन की स्थिति में शांत अवस्था में विद्यमान रहते हैं। किंतु अनादि काल में पुरुष की प्रकृति से निकटता के कारण ये तीन तत्व कम्पायमान अवस्था में आकर सृष्टि का निर्माण करने लगते हैं। इस दर्शन के अनुसार जब पुरुष अथवा शुद्ध चैतन्य, प्रकृति के इस नृत्य अथवा क्रीड़ा से स्वयं को तटस्थ कर स्वयं में लीन हो जाता है तब वह कैवल्य अथवा मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

धर्मनिष्ठ महर्षि दयानन्द जी

राकेश कमार आर्य

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज व्यक्ति के मौलिक अधिकारों के समर्थक और प्रतिपादक थे। इस संदर्भ में उनकी मान्यता थी कि राजधर्म अर्थात् राजनीति का नीति और धर्म पर आधारित होना आवश्यक है। क्योंकि नीति और धर्म आधारित राजनीति ही व्यक्ति को मौलिक अधिकार प्रदान करती है, उसका सर्वांगीण विकास करने में समर्थ होती है। जो राजनीति धर्मविहीन होती है वह व्यक्ति के मौलिक अधिकारों की समर्थक नहीं होती है। वहां धीरे-धीरे समाज में एक दूसरे के अधिकारों की छीना-झपटी का राज स्थापित हो जाता है, लोगों में अकुलाहट फैलती है और कालांतर में ऐमी छीना-झपटी और अकुलाहट अराजकता में परिवनित हो जाती है। जैसा कि हम आज अपने देश में देख भी रहे हैं।

महर्षि दयानन्द नीति और धर्म के उपासक थे। राजधर्म में इसकी महत्ता पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कई स्थलों पर वेद की तत्संबंधी व्यवस्थाओं का उल्लेख किया है। वेद भाष्य करते हुए उन्होंने लिया है-(राजा)-धर्म से राज्य का पालन करो। (यजु. भा. 16-26) राजा भी अधर्म से प्रजाओं को निवृत्त कर धर्म में प्रवृत्त करें और आप भी वैसा होवे। (यजु. भा. 30-3)। तू राजा भी धार्मिक विद्वानों के उपदेशों के अनुकूल होने से राजधर्म का सेवन करता रहा (क.भा. 3-12-16)। जो राजा धर्मयुक्त व्यवहार से प्रजाओं का पालन करे, वहीं राज्य करने जो राजा धर्मयुक्त व्यवहार में प्रजाओं का पालन करे, वही राज्य करने योग्य होता है। (क.भा. 5-3-5)। इस प्रकार महर्षि दयानन्द धर्मनिष्ठ राजनीति को राजकार्यों के संचालन के लिए उपयुक्त और उचित मानते थे। वेद की आज्ञा भी ऐसी ही है।

भारतीय संविधान को व्यवहार में हमारे राजनीतिज्ञों ने चाहे जिस प्रकार लागू किया हो, परन्तु हमारे संविधान निर्माताओं का दृष्टिकोण देश में धर्मनिष्ठ राजनीति को स्थापित कर मानव विकास की सभी सम्भावनाओं को शासन की नीतियों का अंग बनाना था। कांग्रेस और कांग्रेसियों के प्रेरणा स्रोत रहे महात्मा गांधी ने भी कहा था-

'मैं देश की आँखों में धूल नहीं झोकूंगा। मेरे निकट धर्मविहीन राजनीति कोई वस्तु नहीं है। धर्म के मापने बहमो और मतानुगतिकत्व का धर्म नहीं, द्वेष करने वाला और लड़ने वाला लड़ने वाला धर्म (मजहब-सम्प्रदाप) नहीं, अपितु विश्वव्यापी सहिष्णुता (मानवता) का धर्म है। नीति शून्य राजनीति सर्वपात्याज्य है।'

महात्मा गांधी जिसे 'विश्वव्यापी सहिष्णुता' का धर्म कहते हैं, महर्षि उसे मानव का स्वाभाविक धर्म मानते हैं। इसे हमारे संविधान में भी स्थान दिया गया है। राज्य के नीति निर्देशक तत्वों में महर्षि के चिंतन भजन का प्रभाव दिखता है। यद्यपि भारतीय संविधान में इन नीति निर्देशक तत्वों को आयरलैंड के संविधान से लिया गया है। परन्तु किसी भी अच्छी या बुरी चीज को यदि आप कहीं से लेना चाहते हैं तो उसके लिए यह आवश्यक है कि आप अपने मानस में उसका पूर्ण चिंतन कर रहे हैं. या कर चुके हैं। कहने का अभिप्राय है कि आपका अपने मानस में उठने वाला चिन्तन ही आपको अन्तत: किसी चीज को अपनाने के लिए प्रेरित करता है। वह चिंतन भी किसी न किमी के चिंतन से प्रेरित अवश्य होता है। अत: ये नीति निर्देशक तत्व चाहे आयरललैंड के संविधान से ही लिए गए हैं, परन्तु इनके पीछे हमारे संविधान निर्माताओं को प्रेरित करने वाला तत्व महर्षि का चिंतन ही था।

फिर भी हमने इस नीति-निर्देशक तत्वों को उधारी मनीषा माना है। क्योंकि आयरलैंड की सरकार इन्हें अपने नीति निर्देशक तत्व मान सकती है। वह यह भी मान सकती है कि इन नीति निर्देशक तत्वों को न्यायालय से अनिवार्यत: लागू नहीं कराया जा सकता, परन्तु हमारी मान्यता इसके विपरीत है। हमारा मानना है कि नीति निर्देशक तत्व सरकार की नीतियों की अनिवार्य घोषणा हैं। वह अपनी नीतियों में यदि इतर कार्य करने का प्रयास करती है तो इन निर्देशक तत्वों को लागू कराने के लिए नागरिकों को न्यायालय का दरवाजा खटपटाने का भी अधिकार होना चाहिए। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 38 व्यवस्था करता है कि राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनायेगा। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 39 प्राविधानित करता है कि

राज्य लोककल्याण के लिए तथा न्याय की प्राप्ति के लिए अपनी नीती का इस प्रकार निर्देशन करेगा–

1. राज्य सभी नागरिकों के लिए रोजगार के साधन जुटाने का प्रयास करेगा।
2. राज्य की आर्थिक नीतियां ऐसी होनी चाहिये जिससे कि देश के भौतिक साधनों का उचित बंटवारा हो तथा अधिक से अधिक लोगों के हित में उनका उपयोग हो सके।
3. स्त्री और पुरुषों के लिए समान कार्य के लिए समान वेतन मिलना चाहिए।
4. बच्चों और युवकों का आर्थिक व नैतिक शोषण न हो।
5. राज्य का कर्तव्य है कि वह देखे कि पुरुषों को, महिलाओं और बच्चों को आर्थिक विवशता के कारण ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु व शक्ति के अनुकूल न हों।

संविधान के ये अनुच्छेद लोक कल्याणकारी गज्य की स्थापना के लिए हैं। इसके बाद अन्य अनुच्छेदों का उल्लेख हम बाद में करेंगे। पहले इन दोनों अनुच्छेदों पर महर्षि दयानन्द का चिन्तन क्या था? इस पर विचार करते हैं।

राज्य का प्रमुख कार्य-प्रजापालन : महर्षि दयानन्द जी महाराज ने प्रजापालन को राजा का प्रमुख कार्य माना है। डॉ. लाल साहब सिंह के अनुमार– दयानन्द ने राज्य के कार्यों में रक्षणीय की रक्षा, मारने योग्य को मारना, शत्रुओं को अग्निवत भस्म करना, प्रजादि को धनों से आनंदित करना, श्रेष्ठों का सम्मान और दुष्टों का तिरसार करना, धर्मपालन एवं अधर्म का नाश करना, परम्पर प्रीति, एवं उपकार करना, अविद्या और अन्याय का नाश करना, वन सम्पदा, तथा पशु पक्षियों, अविद्या और अन्याय का नाश करना, राज्य की वृद्धि, चक्रवर्ती राज्य का पालन तथा शुभ कर्मों का संरक्षण, राज्य की वृद्धि एवं अशुभ कर्मों का नाश करना आदि यत्र-तत्र उल्लेख अपने वेद भाष्य में किया है।

महर्षि दयानन्द धर्म के दो सोपानों अर्थात् अभ्युदय और नि:श्रेयस को राजधर्म का आधार मानते थे। वह राज्य के लिए उसका धर्म नहीं मानने थे कि उनकी नीतियां ऐसी हों कि जिससे लोगों का अभ्युदय हो अर्थात् भौतिक विकास हो, शारीरिक विकास हो। साथ ही नि:श्रेयस की प्राप्ति हो। इसका अभिप्राय है कि लोगों का पारलौकिक अर्थात् मानसिक और आध्यात्मिक शान्ति और विकास के सभी उपायों को खोजना और उन्हें कार्यरूप में परिणत करना है। राज्य के इसी स्वरूप को लोक कल्याणकारी शासन कहा गया है। जब महर्षि राजा से यह अपेक्षा करते हैं कि उसका व्यवहार अपनी प्रजा के प्रति पितृवत हो, अर्थात् अपनी प्रजा को वह अपने पुत्र के समान प्यार और स्नेह करता हो, तो इसका अभिप्राय ये है कि राजा अपनी प्रजा के कल्याण हेतु सदा प्रयत्नशील रहे।

राजा का न्याय इसी में निहित है कि योग्यता के अनुसार वह सभी लोगों की आजीविका का प्रबंध करे, भय, भूख, भ्रष्टाचार को मिटाये और लोगों को समान कार्य के लिए समान वेतन देने का विधान बनाये। उन्होंने अपने समय में नारियों की दशा को सुधारने का भी भरसक प्रयास किया। महर्षि दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने शिक्षा प्राप्ति के अपने मौलिक अधिकार से वंचित नारी जाति को वेद के पढ़ने का अधिकार दिलवाया। यहीं से नारी को समानता का अधिकार मिला। नारी जाति पर ही नहीं अपितु मानवता पर भी महर्षि का यह महान उपकार था। आज की शिक्षित नारी को इसके लिए महर्षि का विशेष ऋणी होना चाहिए। महर्षि दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' में लिखा है– 'जो लोग स्त्रियों के वेद पढ़ने का निषेध करते हैं, तो वह उनकी मूर्खता, स्वार्थता, और निर्बुद्धिता का प्रभाव है।' ○○

महर्षि दयानन्द नीति और धर्म के उपासक थे। राजधर्म में इसकी महत्ता पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कई स्थलों पर वेद की तत्संबंधी व्यवस्थाओं का उल्लेख किया है। वेद भाष्य करते हुए उन्होंने लिखा है- धर्म से राज्य का पालन करो। राजा भी अधर्म से प्रजाओं को निवृत्त कर धर्म में प्रवृत्त करें और आप भी वैसा होवे। तू राजा भी धार्मिक विद्वानों के उपदेशों के अनुकूल होने से राजधर्म का सेवन करता रहा। जो राजा धर्मयुक्त व्यवहार से प्रजाओं का पालन करे, वही राज्य करने जो राजा धर्मयुक्त व्यवहार में प्रजाओं का पालन करे, वही राज्य करने योग्य होता है।

विकाम भी हो। महर्षि इसी प्रकार की नीतियों को धर्मनिष्ट राजनीति मानते थे। महर्षि के इसी चिंतन पर महात्मा गांधी ने अपनी सहमति प्रकट की। महात्मा गांधी 'सम्प्रदाय' अर्थात् मजहब को धर्म नहीं मानते, वह भी धर्म उसी को मानते हैं जो विश्वव्यापी सहिष्णुता का समर्थक हो। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में मनुस्मृति के निम्नलिखित श्लोक को उद्धृत किया है–

ब्राह्मं प्राप्तेन संस्कारं क्षत्रियेण यथाविधि।
सर्वस्यास्य यथान्यायं कर्तव्यं परिरक्षणम्॥

'जैमा परम विद्वान ब्राह्मण होता है, वैसा विद्वान शुशिक्षित होकर क्षत्रिय को योग्य है कि इस सब राज्य की रक्षा न्याय ने यथावत करे।' इसका अभिप्राय है कि राज्य का मुख्य कार्य समाज में रक्षा और न्याय की व्यवस्था करते हुए

शिक्षा और विद्या!

डॉ. आचार्य महावीर

संस्कृत भाषा की अनेक विशेषताओं में एक बहुत बड़ी विशेषता है। एक ही शब्द के अनेक पर्यायवाची शब्दों की विद्यमानता और एक ही शब्द के अनेक अर्थ। जैसे- जल, भूमि, चंद्र सूर्य, नारी आदि के अनेक पर्यायवाची शब्द वीर, पथ, पृथ्वी, धरणी, वसुधा, शशि, निशाकर, भास्कर, रवि, सविता, स्त्री आदि। एक शब्द के अनेक अर्थ जैसे- गौ का अर्थ पृथवी, इंद्रिया, वाणी, सूर्य की किरणें आदि। अग्नि के अनेक अर्थ ईश्वर, राजा, योगी, यज्ञकुंड में प्रज्वलित अग्नि तथा पाकशाला में प्रज्वलित अग्नि।

इस समानार्थक पर्यायवाची शब्दों पर हम गहनता से विचार करें तो इसमें भी मौलिक अंतर दृष्टिगोचर होता है। ऐसे ही दो शब्द हैं- शिक्षा और विद्या। सामान्य रूप से दोनों समानार्थक प्रतीत होते हैं, किंतु सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर इन दोनों में भिन्नता है। शिक्षा को आंग्ल भाषा में Education एजुकेशन कहा जाता है जबकि विद्या को Knowledge. शिक्षा में निपुण व्यक्ति को Educationist शिक्षाविद और शिक्षा देने वाले व्यक्ति को शिक्षक टीचर कहा जाता है। जबकि विद्या विभूषित को विद्वान ज्ञानवान् कहते हैं और विद्या प्रदाता आचार्य कहलाता है।

हमारे प्राचीन ग्रंथों में विद्या और अविद्या शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग हुआ है। यजुर्वेद के एक मंत्र में कहा गया है- जो मानव विद्या और अविद्या दोनों को जानता है, वह अविद्या से मृत्यु को पार कर विद्या से अमृत को प्राप्त करता है। सामान्यत: अविद्या को विद्या का विलोम कहा जायेगा। अविद्या का अभिप्राय होगा विद्या विहीन। जबकि यहां अविद्या शकहीन अर्थ में प्रयुक्त नहीं है। यहां कहा गया- विद्या और अविद्या दोनों एक साथ होनी चाहिए। मनुष्य जीवन के लिए दोनों उपयोगी हैं- अविधा से मृत्यु का सामना किया जाता है और विद्या से मृत्यु पर विजय पाया जाता है।

संस्कृत भाषा में अ (नञ्) अनेक अर्थों का वाचक है। कहीं ईषद् और कहीं सादृश्य अर्थ में यह प्रयुक्त होता है। अविद्या में सादृश्य अर्थ में प्रयुक्त हैं। अर्थात् जो विद्या तो नहीं है, किन्तु विद्या जैसा है। विद्या जैसा क्या हो सकता है, इस विषय पर चिन्तन करने के लिए बृहदारण्यकोपनिषद् के याज्ञवल्क्यमैत्रेयी संवाद को आधार बनाया जा सकता है। उपनिषद् में लिखा है- महर्षि याज्ञवल्क्य सफल सांसारिक जीवन बिताकर सब-कुछ छोड़कर जंगल में जाकर रहने की योजना बना रहे थे। उन्होंने अपनी पत्नी मैत्रेयी से कहा- लो यह सब धन-दौलत तुझे देता हूं। आनन्द से जीवन यापन करना। मैत्रेयी ने पूछा- इतनी धन सम्पत्ति छोड़कर आप क्यों जा रहे हैं? महर्षि याज्ञवल्क्य ने उत्तर दिया- संसार की धन सम्पत्ति से खाना-पीना आदि बहुत अच्छी तरह चल सकता है, सांसारिक सुख मिल सकते हैं, इससे अधिक कुछ नहीं। इसलिये यह सब तुम्हें दे रहा हूं। यह सुनकर मैत्रेयी सोचने लगी, एक ओर धन-सम्पत्ति है जिससे केवल जीवन चलता है, दूसरी ओर अमर जीवन है, जिसे पाने के लिए याज्ञवल्क्य जीवन का दूसरा मार्ग अपना रहे हैं, मैं भी उसी मार्ग को क्यों न अपनाऊं। उस समय पति-पत्नी में जो संवाद हुआ, वह बड़ा मार्मिक है।

याज्ञवल्क्य मैत्रेयी से कहते हैं- हे मैत्रेयी! सच बात तो यह है कि अगर मनुष्य के पास इतना धन एकत्रित हो जाय जितना सारी पृथ्वी पर है, तब भी उसका जीवन उतना ही सुखी हो सकता है जितना साधन-संपन्न व्यक्तियों का होता है। उसके पास सांसारिक, भौतिक सुख के सब साधन वैसा ही सुख देंगे, सारी दुनिया ऐसे ही सुख-साधन जुटाने में लगी हुई है। यह एक ऐसा मार्ग है जिस पर चलकर पूर्ण तृप्ति नहीं होती। अत: मैं उस आनन्द को खोज में निकल रहा हूं जो कभी बासी या पुराना नहीं होता। इस अमृत को प्राप्त कराने वाले साधन को कठोपनिषद् और ईशावास्योपनिषद् में विद्या कहा गया, और सांसारिक सुख, वैभव प्राप्त कराने वाली अविद्या।

यह अविद्या भी बहुत महत्वपूर्ण है। इसके बिना संसार यात्रा सुखपूर्वक संपन्न नहीं हो सकती। वर्तमान समय में प्रचलित शिक्षा शब्द का अभिप्राय

भी यही है। अत: वाणिज्य अभियांत्रिकी, चिकित्सा विज्ञान, कृषि, उद्योग आदि के लिए शिक्षा शब्द का प्रयोग उचित प्रतीत होता है। इसका संबंध शरीर से है जबकि विद्या का संबंध आत्मा से है। प्रकृति के नाना पदार्थों को प्राप्त कराने वाली शिक्षा है, जिसको प्राप्त कर लेने पर अच्छी नौकरी, अच्छा व्यापार, उद्योग, अच्छी कृषि और उससे प्रभूत धन-ऐश्वर्य अर्जित किया जा सकता है, किंतु विद्या आत्मा का भोजन है। विद्या आत्मा और परमात्मा का योग कराती है, जहां आनन्द ही आनन्द प्रवाहित हो रहा है। विद्या आत्मज्ञान है, आत्मज्ञानी को नारदमुनि ने आत्मवित् और गीता ने 'आत्मरत, आत्मतृप्त, आत्मतुष्ट, आत्मकाम' कहा है। विद्या मानव का रूपांतरण कर देती है, उसे नया जन्म दे देती है, जीवन के प्रति उसकी दृष्टि बदल जाती है।

विद्या को ज्ञान का अत्यंत निकटवर्ती शब्द कहा जा सकता है। शास्त्रों ने कहा 'ऋते ज्ञानात्र मुक्ति:' ज्ञान प्राप्त किये बिना बंधन से छुटकारा नहीं हो सकता। बंधनमुक्त करने वाले इस अतिशय पवित्र ज्ञान को उपनिषदों ने विद्या कहा। प्राचीनकाल में इसी विद्या को प्राप्त करने ऋषिकुमार ऋषियों के चरणों में उपस्थित हुआ करते थे। अविद्या भी विद्या की विरोधी नहीं अपितु सहयोगिनी है। इस भौतिक जगत् का बोध कराकर अपार धन वैभव प्राप्त कराने वाली अविद्या अर्थात् शिक्षा भी हेय नहीं है। शिक्षा के पश्चात् विद्या। और विद्या से अमृतत्व की प्राप्ति।

वेदों का अध्ययन करने के लिए निर्मित वेदाङ्ग साहित्य में शिक्षा भी एक प्रमुख अङ्ग है। वहां शिक्षा की परिभाषा दी गई है- 'स्वरवर्णायुच्चारणप्रकारो यत्र शिक्ष्यते उपदिश्यते सा शिक्षा'-(सायण, ऋग्वेदभाष्य-पृ.41)। इस प्रकार शिक्षा वेदाङ्ग का उद्देश्य है- वर्णोच्चारण की शिक्षा देना, किस वर्ण का किस स्थान से उच्चारण किया जाता है, उसमें क्या प्रयत्न करना पड़ता है, उसका विभाजन किस रूप में होता है, कितने स्थान और प्रयत्न हैं इत्यादि। तैत्तिरीय उपनिषद में शिक्षा के छह अंग का उल्लेख है। ये हैं- वर्ण, स्वर, मात्रा, बल, साम और संतान। मराठी भाषा में शिक्षा का एक अर्थ दंड भी होता है। श्री युत्त्वामन शिवराम आप्टे ने संस्कृत-हिंदी शब्दकोष में शिक्षा का अर्थ इस प्रकार दिया है- शिक्ष् भाव अ+टाप्। अधिगम, अध्ययन, ज्ञानाभिग्रहण। किसी कार्य को करने के योग्य होने की इच्छा, निष्णाम होने की इच्छा। ■■■

महाराणा प्रताप से सीखो

भारत देश की महान वैदिक सभ्यता में नारी को पूजनीय होने के साथ-साथ 'माता' के पवित्र उद्बोधन से संबोधित किया गया है। मुस्लिम काल में भी आर्य हिन्दू राजाओं द्वारा प्रत्येक नारी को उसी प्रकार से सम्मान दिया जाता था जैसे कोई भी व्यक्ति अपनी मां का सम्मान करता हैं।

यह गौरव और मर्यादा उस कोटि के हैं, जो की संसार के केवल सभ्य और विकसित जातियों में ही मिलते हैं। इस्लामिक हमलावरों ने पिछले 1200 वर्षों में नारी जाति का कितना सम्मान किया है। इसका अंदाजा आप 8वीं शताब्दी में सिंध पर हमला करने वाले मोहम्मद बिन कासिम द्वारा फारस के बाजारों में हिन्दू लड़कियों को एक-एक दीनार में बेचने से लगा सकते है। यह सिलसिला आज भी यथावत चल रहा है। ISIS के लड़ाकों द्वारा यजीदी लड़कियों को सरेआम कैसे बेचा गया सभी को मालूम है।

महाराणा प्रताप के मुगलों के संघर्ष के समय स्वयं राणा के पुत्र अमर सिंह ने विरोधी अब्दुरहीम खानखाना के परिवार की औरतों को बंदी बनाकर राणा के समक्ष पेश किया तो राणा ने क्रोध में आकर अपने बेटे को हुक्म दिया की तुरंत उन माताओं और बहनों को पूरे सम्मान के साथ अब्दुरहीम खानखाना के शिविर में छोड़ कर आये एवं भविष्य में ऐसी गलती दोबारा न करने की प्रतिज्ञा करें।

ध्यान रहे महाराणा ने यह आदर्श उस काल में स्थापित किया था जब मुगल अबोध राजपूत राजकुमारियों के डोले के डोले से अपने हरम भरते जाते थे। बड़े-बड़े राजपूत घरानों की बेटियां मुगलिया हरम के सात पर्दों के भीतर जीवन भर के लिए कैद कर दी जाती थी। महाराणा चाहते तो उनके साथ भी ऐसा ही कर सकते थे पर नहीं उनका स्वाभिमान ऐसी इजाजत कभी नहीं देता था।

काश हमारे देश के मुसलमान क़ासिम, गौरी, गजनी का गुणगान करने के स्थान पर महाराणा प्रताप के आचरण से कुछ सीखते? वीरता और दृढ संकल्प के प्रतीक, महान योद्धा, राष्ट्र धर्म रक्षक, वीर शिरोमणि, राष्ट्रीय गौरव महाराणा प्रताप जी को कोटि-कोटि नमन!!

विवेक आर्य

ईश्वर को यदि न जाना व पाया तो मनुष्य जीवन अधूरा व व्यर्थ है

मनमोहन कुमार आर्य
देहरादून, उत्तराखंड

हम मनुष्य हैं, मनुष्य मननशील प्राणी को कहते हैं। सृष्टि में असंख्य प्राणी योनियां हैं जिसमें एकमात्र मनुष्य ही मननशील प्राणी है। अतः हम सबको मननशील होना चाहिये। विचार करने पर लगता है कि सभी लोग मननशील नहीं होते। अधिकांश लोगों को अपने बारे में व इस सृष्टि के बारे में अनेक तथ्यों व रहस्यों का ज्ञान नहीं होता। हम कौन हैं, हम कहां से आये हैं व कहां जाना है, कौन हमें इस सृष्टि में लाया है और उससे हमें क्या क्या व कैसे सुखकारी वस्तुयें प्राप्त हो सकती हैं? हम मननशील होने के कारण ऐसे सभी प्रश्नों को जान सकते हैं और इनके आधार पर अपने जीवन के भविष्य की योजना बना सकते हैं।

हमें स्वयं के साथ इस सृष्टि के रचयिता व पालक परमेश्वर को भी जानना है। जानने के बाद हमें उसे अपने अनुकूल व हितकारी भी बनाना है जिससे हमारा यह जीवन व इसके बाद का दूसरा व उसके बाद के सभी जीवन भी सुखद व उन्नति को प्रदान कराने वाले हों। ऐसा करके हम अपनी आत्मा के गुण 'ज्ञान व कर्म' का उचित लाभ प्राप्त करने के साथ मननशील होकर मनुष्य जीवन की उच्च स्थिति को प्राप्त हो सकेंगे। मनुष्य को उच्चतम स्थिति ईश्वर को जानकर उसका साक्षात्कार करने, वेदों का ज्ञान प्राप्त करने, ईश्वरोपासना व अग्निहोत्र यज्ञ सहित पंच महायज्ञों को करने, परोपकार, दान करने सहित देश हित के कार्यों को करने और ऐसा करते हुए अपने गृहस्थ जीवन के सभी दायित्वों का भली प्रकार से निर्वाह करने से ही प्राप्त होती है। यह स्थिति सबके प्राप्त करने योग्य है।

मनुष्य का प्रथम कर्तव्य तो उसे स्वयं का यथार्थ परिचय प्राप्त करना चाहिये और उसे जानकर आत्मा की सर्वांगीण उन्नति के लिए प्रयत्न करने चाहिये। ऐसा करना ही मनुष्य का कर्तव्य व धर्म भी होता है। आत्मा एक चेतन, अल्पज्ञ, एकदेशी, ससीम, अनादि, नित्य, अजर, अमर, अविनाशी, जन्म व मरण धर्मा, वेद ज्ञान को प्राप्त होकर सत्कर्मों व धर्म कार्यों को करने वाला तथा इनसे ईश्वर के साक्षात्कार तथा मुक्ति को प्राप्त करने वाली एक सूक्ष्म सत्ता है जो ज्ञान व कर्म करने की क्षमता से युक्त होती है। हमारी जैसी अनन्त आत्मायें इस संसार में हैं।

मनुष्यों सहित पशु, पक्षी व इतर प्राणी योनियों की सभी आत्मायें भी हमारी आत्माओं के समान हैं। पूर्वजन्मों में जिस आत्मा ने मनुष्य योनि में जो शुभ व अशुभ कर्म किये थे, उनका फल भोगने के लिये ही परमात्मा ने न्यायपूर्वक उन्हें भिन्न भिन्न योनियों व परिस्थितियों में जन्म दिया है। हम शुभ व सत्कर्मों को करते हुए अपनी स्थिति को निरंतर सुधार व

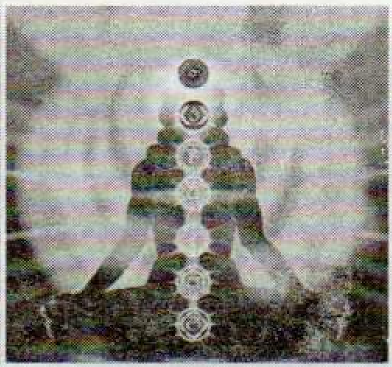

आत्मा एक चेतन, अल्पज्ञ, एकदेशी, ससीम, अनादि, नित्य, अजर, अमर, अविनाशी, जन्म व मरण धर्मा, वेद ज्ञान को प्राप्त होकर सत्कर्मों व धर्म कार्यों को करने वाला तथा इनसे ईश्वर के साक्षात्कार तथा मुक्ति को प्राप्त करने वाली एक सूक्ष्म सत्ता है जो ज्ञान व कर्म करने की क्षमता से युक्त होती है। हमारी जैसी अनन्त आत्मायें इस संसार में हैं। मनुष्यों सहित पशु, पक्षी व इतर प्राणी योनियों की सभी आत्मायें भी हमारी आत्माओं के समान हैं। पूर्वजन्मों में जिस आत्मा ने मनुष्य योनि में जो शुभ व अशुभ कर्म किये थे, उनका फल भोगने के लिये ही परमात्मा ने न्यायपूर्वक उन्हें भिन्न भिन्न योनियों व परिस्थितियों में जन्म दिया है। हम शुभ व सत्कर्मों को करते हुए अपनी स्थिति को निरंतर सुधार व संवार सकते हैं। एक बच्चा जन्म के 20-25 वर्षों में युवा बन जाता है। उसे माता, पिता तथा गुरुजन जो अध्ययन कराते हैं तथा समाज में जैसा वातावरण उसे मिलता है, वैसा ही वह बन जाता है। यदि सभी मनुष्यों को वेदज्ञान से पूर्ण वातावरण तथा वैदिक परम्पराओं का ज्ञान व अभ्यास कराया जाये तो उनका जीवन वैदिक जीवन के समान ही बनेगा। आज के मनुष्यों को यह ज्ञान नहीं होता कि वह जो भी शुभ व अशुभ कर्म करते व करेंगे, उसका फल उन्हें इस जन्म व परजन्म में भोगना पड़ेगा।

संवार सकते हैं। एक बच्चा जन्म के 20-25 वर्षों में युवा बन जाता है। उसे माता, पिता तथा गुरुजन जो अध्ययन कराते हैं तथा समाज में जैसा वातावरण उसे मिलता है, वैसा ही वह बन जाता है। यदि सभी मनुष्यों को वेदज्ञान से पूर्ण वातावरण तथा वैदिक परम्पराओं का ज्ञान व अभ्यास कराया जाये तो उनका जीवन वैदिक जीवन के समान ही बनेगा। आज के मनुष्यों को यह ज्ञान नहीं होता कि वह जो भी शुभ व अशुभ कर्म करते व करेंगे, उसका फल उन्हें इस जन्म व परजन्म में भोगना पड़ेगा। इससे अनभिज्ञ रहकर कर्म करने से उनके कार्यों में लोभ व स्वार्थवश अनुचित कर्म भी हो जाते हैं जो उनका भविष्य व परजन्म बिगाड़ देते हैं। अतः मनुष्य को सावधान रहकर शुद्ध व पवित्र जीवन बनाने तथा वेद विहित सत्य व परिणाम में सुख देने वाले कर्मों को ही करना चाहिये। ऐसा करके ही मनुष्य अपने जीवन को सुधार व संवार सकते हैं तथा दूसरों को प्रेरणा भी दे सकते हैं।

मनुष्य का स्वयं को तथा इस संसार के स्वामी परमात्मा को भी जानना कर्तव्य है। इसी लिये परमात्मा ने उसे मनुष्य जन्म देकर उसे बुद्धि दी है। अपने शरीर व ज्ञान इन्द्रियों का सदुपयोग कर मनुष्य को शिक्षा प्राप्त करते हुए अनात्म के साथ आत्म तत्वों का ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिये। इन दोनों विषयों का अच्छा संतुलित ज्ञान सत्यार्थप्रकाश सहित वेद व वैदिक साहित्य के अध्ययन से होता है। वेदों में तृण से लेकर परमात्मा सहित सभी पदार्थों का ज्ञान दिया गया है। अतः वेदों का स्वाध्याय करने से मनुष्यों को लाभ होता है। अन्य कार्यों को करते हुए सब मनुष्यों को वेद व वेदज्ञानी ऋषियों के ग्रन्थों का स्वाध्याय भी नित्य प्रति अनिवार्य रूप से करना चाहिये। इसी से मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति होती है। स्वाध्याय से मनुष्य परमात्मा, आत्मा सहित सभी सांसारिक विषयों को उत्तम रीति से जान जाता है और इनका सदुपयोग करते हुए जीवन व्यतीत करता है।

सत्यार्थप्रकाश में सत्य के अर्थ का प्रकाश तो किया ही गया है इसके साथ संसार में प्रचलित अविद्यायुक्त मत-मतान्तरों की मान्यताओं का प्रकाश व उनकी समीक्षा भी की गई है जिससे लोग सत्यासत्य को जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग कर सके। अतः सभी मनुष्यों को सत्यार्थप्रकाश सहित उपनिषद, दर्शन, विशुद्ध मनुस्मृति एवं वेदभाष्यों के अध्ययन को अपने जीवन का अंग बनाना चाहिये। इससे ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि होगी और मनुष्य को उन सत्यकर्मों जिनसे मनुष्य जीवन में सुखों का विस्तार होता है, उनका ज्ञान होगा और उन्हें करके जीवन निश्चय ही सन्तुष्ट एवं यशस्वी बनेगा।

हम प्राचीन वैदिक साहित्य पर दृष्टि डालते हैं तो हमें ज्ञात होता है कि हमारे पूर्वज अति बुद्धिमान व्यक्ति सांसारिक मार्ग के विपरीत योग व वैराग्य के मार्ग पर चलते थे। जीवन में अधिक राग व मोह आदि का होना उचित नहीं होता। सबका संतुलन ही उचित होता है। इसके लिये हमें ऋषियों तथा महापुरुषों राम, कृष्ण, दयानन्द जी आदि के जीवन पर भी दृष्टि डालनी चाहिये। इससे हमें प्रेरणायें प्राप्त होंगी और हम जीवन में सत्य का धारण कर जीवन में ऊपर उठ सकते हैं। रामचन्द्र जी तथा कृष्णचन्द्र जी सहित ऋषि दयानन्द का जीवन धर्म की मर्यादाओं के अनुकूल जीवन था। उनके जीवन में जो गुण हमें दिखाई दें, उनको हमें अपने जीवन में भी धारण करना चाहिये। सभी मनुष्य को सत्य का पालन करते हुए देश व धर्म के हित के कार्य करने चाहिये। अपने हित व स्वार्थ के लिये कभी असत्य कर्मों व आचरणों का सहारा नहीं लेना चाहिये। यह शिक्षा हमें ऋषियों व महापुरुषों के जीवन में मिलती है।

महर्षि दयानन्द एवं आर्यसमाज के बारे में महापुरुषों के विचार

- भारत की स्वतंत्रता की नींव वास्तव में स्वामी दयानन्द ने डाली थी।
  – सरदार पटेल
- ऋषि दयानन्द के द्वारा कि गई वेदों कि व्याख्या कि पद्धति बौधिकता, उपयोगिता, राष्ट्रीयता एवं हिंदुत्व के परंपरागत आदेशों के अद्भुत योग का परिणाम हैं।
  –एच. सी. ई. जैकेरियस
- महर्षि दयानन्द दिव्य ज्ञान के सच्चे सैनिक थे, विश्व को प्रभु कि शरणों में लाने वाला योद्धा और मनुष्य व संस्थाओं का शिल्पी तथा प्रकृति द्वारा आत्माओं के मार्ग से उपस्थित की जाने वाली बाधाओं के वीर विजेता थे।
  – योगी अरविन्द
- मुझे स्वाधीनता संग्राम में सर्वाधिक प्रेरणा स्वामी महर्षि दयानन्द सरस्वती के ग्रंथों से मिली है।
  – दादा भाई नैरो जी

श्रावण : यज्ञमयी नौका

पृथक प्रायन् प्रथमा देवहूतयोऽकृण्वत श्रवस्यानि दुष्टरा। न ये शेकुर्यज्ञियां नावमारुहमीर्मैव ते न्यविशन्त केपयः।।

–ऋ १०/४४/६; अथर्व.२०/९४/६

ऋषि :-आङ्गिरसो कृष्णः।।

देवता- इन्द्रः।। छन्दः- निचृज्जगती।।

विनय– भाइयो! इस संसार-सागर से हमें तरा सकने वाली नौका यज्ञमयी ही है। हम यदि यज्ञकर्म नहीं करेंगे तो हम न केवल मनुष्यत्व से ऊपर नहीं उठ सकेंगे अपितु मनुष्यत्व को भी कायम नहीं रख सकेंगे, तब हमें नीचे पशुत्व में अध:पतित होना पड़ेगा। देखो, बहुत-से 'देव-हूति' पुरुष उन देवलोक, पितृलोक, ब्रह्मलोक आदि दुष्प्राप्य यशोमय उच्च लोकों को पहुंच गये हैं। बड़े भारी यत्न से इस मनुष्यावस्था को तरकर देव हो गये हैं। ये लोग यज्ञिय नाव पर चढ़कर ही वहां पहुंचे हैं।

इन्होंने अपने में देवों का, दिव्यताओं का, आह्वान किया है और 'प्रथम' बने हैं। दूसरी ओर वे अभागे मनुष्य हैं जो कि थोड़ा-सा स्वार्थत्याग न कर सकने के कारण, अयज्ञिय हो ऋणबद्ध रहने के कारण, उस नाव का आश्रय नहीं पा सके हैं, अत: यहीं बंधे रह गये हैं।

ये बेचारे 'केपि'= कुत्सिताचरणी लोग यहां भी नीचे धंसते जा रहे हैं, पशुत्व में गिर रहे हैं। इनका फिर पवित्र बनना अब अत्यंत कठिन हो गया है, अत: आओ, मनुष्य योनि पाकर हम कुछ-न-कुछ तो स्वार्थ त्याग करें, इतना यज्ञ-कर्म तो करें कि ऋणबद्ध न बने रहें।

हम पर जो माता, पिता, गुरु, समाज, राष्ट्र, मनुष्यता, प्रकृतिमाता और परमेश्वर आदि के ऋण हैं, उन्हें उतारने के लिए तो अपने स्वार्थों का नित्य हवन किया करें। हम यदि इतना करेंगे, केवल परमावश्यक पंचयज्ञों को यथाशक्ति करते रहेंगे, तो भी हम इस यज्ञिक नौका पर चढ़ सकेंगे और देवयान लोकों को नहीं तो कम से कम पितृयान लोकों को तो जा पहुंचेंगे, अपने मनुष्यत्व को तो नहीं खो देंगे। भाइयों! यज्ञमयी नौका खड़ी है।

हम चाहें तो देवहूति होकर, दिव्यस्वभाव, धर्मशील होकर, यज्ञ-नौका द्वारा इस दुस्तर सागर को तरकर ज्ञानैश्वर्यमय उच्च-से-उच्च लोकों तक पहुंच सकते हैं नहीं तो फिर यदि हम इस नौका में स्थान न पा सके तो हम ऐसी खराब परिस्थिति में आ पड़ेंगे और वहां ऐसे निर्लज्ज बन जाएंगे कि हम कुत्सित, अपवित्र कर्मों के करने में ही सुख पाएंगे और नीचे-ही-नीचे गिरते जाएंगे, फिर हमारे उद्धार का दूसरा अवसर कितने काल बाद आवेगा यह कौन जानता है?

शब्दार्थ-प्रथमाः= जो प्रथम प्रकार के या विस्तृत ज्ञानी

बहुत-से 'देव-हूति' पुरुष उन देवलोक, पितृलोक, ब्रह्मलोक आदि दुष्प्राप्य यशोमय उच्च लोकों को पहुंच गये हैं। बड़े भारी यत्न से इस मनुष्यावस्था को तरकर देव हो गये हैं। ये लोग यज्ञिय नाव पर चढ़कर ही वहां पहुंचे हैं। इन्होंने अपने में देवों का, दिव्यताओं का, आह्वान किया है और 'प्रथम' बने हैं। दूसरी ओर वे अभागे मनुष्य हैं जो कि थोड़ा-सा स्वार्थत्याग न कर सकने के कारण, अयज्ञिय हो ऋणबद्ध रहने के कारण, उस नाव का आश्रय नहीं पा सके हैं, अतः यहीं बंधे रह गये हैं।

देवहूतयः= देवों अर्थात् दिव्य गुणों का आह्वान करने वाले मनुष्य होते हैं वे **पृथक=** जुदा ही **प्रायन्=** प्रकृष्ट मार्ग से (अपने-अपने लोकों को) पहुंचते हैं। वे **दुष्टरा=** बड़े दुस्तर **श्रवस्यानि=** ज्ञानैश्वर्यों को, श्रवणीय यशों को **अकृण्वत=** प्राप्त कर लेते हैं, परंतु **ये=** जो **यज्ञियां नावम्=** इस यज्ञमयी नाव पर **आरुहम्=** चढ़ने में **न शेकुः=** समर्थ नहीं होते **ते=** वे **केपयः=** कुत्सित, अपवित्र आचरण वाले होकर **ईर्मा एव=** यहीं इस लोक में **न्यविशन्त=** नीचे-नीचे जाते हैं।

कर्त्तव्यपालनम्

डॉ. शिव प्रसाद शर्मा

अस्मिन् संसरे न कोऽपि ईदृशः यस्य किमपि कर्त्तव्यं न भवति। स्वेच्छया परेच्छया परवशतया वा विधीयमानः कार्यभारः कर्त्तव्यमिति कथ्यते। कर्त्तव्यानां पालनं सर्वैः कार्यम्। कर्त्तव्यपालनमेव मानवन् समाजेन राष्ट्रेण जातिना च संयोजयन्ति। मानवः जन्मग्रहणानन्तरमेव कर्त्तव्य भाराक्रान्तः भवति। तत्समक्षं बहुविधकर्त्तव्यमायाति। एषु कर्त्तव्यानि परमात्मने समर्प्यन्ते, ऐहिकानि तु स्वयंमेवाधीयन्ते। कर्त्तव्यपालनादेव मनुष्यत्वस्य महत्वं वर्धते। यः कर्त्तव्यं पालयति, स एव समाजं राष्ट्रं स्वजातिश्च समुत्थाप्य सर्वेषां सभाजनीयः भवति। यदा सर्वे स्वकर्त्तव्यानां पालनं कुर्वन्ति, तदा नूनं समाजस्य राष्ट्रस्य जातेश्च अभ्युत्थानं भवति।

कर्त्तव्यपालनं नातिसरलम् अस्य कृते मानसिकदार्ढ्यम् अत्यावश्यकम्। कर्त्तव्यपालने नानाविधानि विघ्नानि आपतन्ति। तत्र केचन तैः विघ्नैः विमोहिताः सन्तः कर्त्तव्यात् पराङ्गमुखाः अन्ये धर्मवीराः साहसेन स्वकर्त्तव्यपालनं कुर्वन्ति उक्तश्च-

प्रारभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः।
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारब्धमुत्तमगुणाः न परित्यजन्ति॥

सत्यवादी हरिश्चन्द्रः अस्योदाहरणम्। कर्त्तव्यपालनाय सः प्राणधिकस्य प्रियस्य स्वपुत्रस्य रोहितस्य मृतशरीरस्य ऊर्ध्वदैहिक क्रियासम्पादनाय स्वपत्न्याः करप्रदानं विनेवे प्रार्थनां कर्णे न कृतवान्। जामदग्न्यः परशुरामः पितृवचनं प्रमाणीकृत्य स्वमातुः शिरं कठोरकुठारेण अकम्पितहृदयं चिच्छेद। आधुनिकयुगेऽपि कर्त्तव्यपालकानां अभावः न दृश्यते। राणा प्रताप, शिवाजी, लक्ष्मीबाई, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, महात्मा गांधी, प्रभृतयः विघ्नेभ्यः स्वपराजयममन्यमानाः सततं कर्त्तव्यपालनमकुर्वन्।

अस्माकं स्मृतिग्रंथेषु प्राणिनः कर्त्तव्या कर्त्तव्यस्य विस्तृताध्ययनं चतुर्षु भागेषु विभज्य कर्त्तव्यानि निर्धारितानि सन्ति। यथा वाल्यावस्थायाम् अतीत्य शैशवम् कौमार्यपर्यन्तम् ब्रह्मचर्यपालनम् विद्याध्ययनश्च। प्राप्ते यौवने तु गुरुणाऽधीतविद्यायाः समाजकल्याणे विनियोगः शास्त्रोपदिष्टगार्हस्थ्य धर्मपालनश्च। अपगतयौवने कतल सांसारिक सुखानुभुज्य त्यक्तसंगः सन् जरायां परलोक सिध्यर्थ ईश्वराराधनं स्वानुभवैः भविष्यत्समाजस्य मार्गदर्शनश्च। अन्ते सर्वविधरागान् परिज्यज्य योगेन ईश्वरसायुज्यप्राप्ति। ऋणत्रयेभ्यः मुक्तिः अपि कर्त्तव्यपालनेनैव सम्भवति। मानवजीवनोपरि जनयितुः गुरोः देवनाश्च भवति। तेभ्यः सः स्वपुत्रस्य यथोचित लालनात् शिक्षणात् धर्मानुष्ठानाच्च मुच्यते।

अधुना राष्ट्रे कर्त्तव्यपरायणतायाः अभावः विद्यते। सम्प्रति सर्वे स्वाधिकारानेव स्मरन्ति न कर्त्तव्यानि। अस्य दुष्परिणामो प्रत्यक्षमेव। सर्वत्र अशान्तेः साम्राज्यं विद्यते। संयुक्तपरिवारव्यवस्था भिन्न। सामाजिक बंधनान्यपि शिथिलभूतानि। पाश्चात्यदेशसंस्कृतेः प्रभावात् वयं जागृता। परंतु अस्माभिः स्वकर्त्तव्यं न विमरणीयम्। अन्यथा राष्ट्रस्य समाजस्य जातेश्च समुन्नतिः च अरक्षिता भविष्यति।

OO

आर्योद्देश्यरत्नमाला

- **आप्त :** जो छलादि दोष-रहित, धर्मात्मा, विद्वान, सत्योपदेष्टा, सब पर कृपादृष्टि से वर्तमान होकर आविद्यांधकार का नाश करके अज्ञानी लोगों के आत्माओं में विद्यारूप सूर्य का प्रकाश सदा करे, उसको 'आत्म' कहते हैं।
- **परीक्षा :** जो प्रत्यक्षादि आठ प्रमाण, वेदविद्या, आत्मा की शुद्धि और सृष्टिक्रम से अनुकूल विचार के सत्यासत्य को ठीक-ठीक निश्चय करना है, उसको 'परीक्षा' कहते हैं।
- **आठ प्रमाण :** प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, ऐतिहा, अर्थापत्ति, सम्भव और अभाव, ये 'आठ प्रमाण' हैं। इन्हीं से सब सत्यासत्य का यथावत् निश्चय मनुष्य कर सकता है।

15 अगस्त : स्वतंत्रता दिवस

सदियों की गुलामी के पश्चात 15 अगस्त 1947 के दिन आजाद हुआ। पहले हम अंग्रेजों के गुलाम थे। उनके बढ़ते हुए अत्याचारों से सारे भारतवासी त्रस्त हो गए और तब विद्रोह की ज्वाला भड़की और देश के अनेक वीरों ने प्राणों की बाजी लगाई, गोलियां खाईं और अंतत: आजादी पाकर ही चैन लिया। इस दिन हमारा देश आजाद हुआ, इसलिए इसे स्वतंत्रता दिवस कहते हैं। अंग्रेजों के अत्याचारों और अमानवीय व्यवहारों से त्रस्त भारतीय जनता एकजुट हो इससे छुटकारा पाने हेतु कृतसंकल्प हो गई। सुभाषचंद्र बोस, भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद ने क्रांति की आग फैलाई और अपने प्राणों की आहुति दी। तत्पश्चात सरदार वल्लभभाई पटेल, गांधीजी, नेहरूजी ने सत्य, अहिंसा और बिना हथियारों की लड़ाई लड़ी। सत्याग्रह आंदोलन किए, लाठियां खाईं, कई बार जेल गए और अंग्रेजों को हमारा देश छोड़कर जाने पर मजबूर कर दिया। इस तरह 15 अगस्त 1947 का दिन हमारे लिए 'स्वर्णिम दिन' बना। हम, हमारा देश स्वतंत्र हो गए। यह दिन 1947 से आज तक हम बड़े उत्साह और प्रसन्नता के साथ मनाते चले आ रहे हैं। इस दिन सभी विद्यालयों, सरकारी कार्यालयों पर राष्ट्रीय ध्वज फहराया जाता है, राष्ट्रगीत गाया जाता है और इन सभी महापुरुषों, शहीदों को श्रद्धांजलि दी जाती है जिन्होंने स्वतंत्रता हेतु प्रयत्न किए। मिठाइयां बांटी जाती हैं। हमारी राजधानी दिल्ली में हमारे प्रधानमंत्री लाल किले पर राष्ट्रीय ध्वज फहराते हैं। वहां यह त्योहार बड़ी धूमधाम और भव्यता के साथ मनाया जाता है। सभी शहीदों को श्रद्धांजलि दी जाती है। प्रधानमंत्री राष्ट्र के नाम संदेश देते हैं। अनेक सभाओं और कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। इस दिन का ऐतिहासिक महत्व है। इस दिन की याद आते ही उन शहीदों के प्रति श्रद्धा से मस्तक अपने आप ही झुक जाता है जिन्होंने स्वतंत्रता के यज्ञ में अपने प्राणों की आहुति दी। इसलिए हमारा पुनीत कर्तव्य है कि हम हमारी स्वतंत्रता की रक्षा करें। देश का नाम विश्व में रोशन हो, ऐसा कार्य करें। देश की प्रगति के साधक बनें न कि बाधक। घूस, जमाखोरी, कालाबाजारी को देश से समाप्त करें। भारत के नागरिक होने के नाते स्वतंत्रता का न तो स्वयं दुरुपयोग करें और न दूसरों को करने दें। एकता की भावना से रहें और अलगाव, आंतरिक कलह से बचें। हमारे लिए स्वतंत्रता दिवस का बड़ा महत्व है।

योगेश्वर श्रीकृष्ण द्वारा रचित गीता : एक दिव्य संदेश

एक संक्षिप्त काव्य के रूप में- "कर्म योग है पावन गीता, भव, भय, ताप, नशावन गीता। नौका की पतवार है गीता, जगती से उद्धार है गीता। मृत्यु विराम नहीं जीवन का, है निष्काम कर्म का दर्शन। जिससे हो न स्वार्थ का बंधन, कर्म योग है पावन गीता। भव, भय, ताप, नशावन गीता॥"
अर्थात् यह पवित्र गीता का उपदेश कर्मयोग है अथवा यूं कहें कि कर्मक्षेत्र है जो कि प्रत्येक प्राणी का अलग-अलग होता है। अध्यापक का विद्यालय में शिक्षण कार्य, कृषक का खेत खलिहान, विद्यार्थी का पठन क्षेत्र, व्यापारी का कर्मक्षेत्र उसका व्यवसाय, एकाउंटेंट का लेखा-जोखा करना, ये सब उनके कर्मक्षेत्र नहीं तो और क्या है?

गीता के अनुसार एक पल भी प्राणी कर्म किए बिना नहीं रहता। यहां तक कि श्वास लेना एवं छोड़ना यह भी कर्म ही है, अगर इसमें बाधा आने लगे तो उसके उपाय के लिए भी प्राणी व्याकुल हो उठता है। वास्तव में जिंदगी एक संघर्ष है। बुराई और भलाई, पाप-पुण्य, हानि-लाभ इत्यादि का युद्ध क्षेत्र है। यह चलता ही रहता है। इसीलिए श्रीकृष्ण जी कहते हैं क 'तस्मात् सर्वेषु कालेषु काम अनुस्मर' अर्थात् प्रत्येक पल मेरा ही स्मरण रखो। महाभारत के युद्ध क्षेत्र में 'कौरव सौ थे और पांडव पांच' कहने का तात्पर्य यह है कि दुनियां में बुरे लोग अधिक होते हैं और भले लोग कम। परंतु हमें स्मरण रखना चाहिए कि बुराई पर हमेशा भलाई की, असत्य पर सत्य की ही विजय होती है। क्योंकि जब प्राणी 'गीता के रचयिता श्रीकृष्ण को' अपनी जीवन रूपी नौका की पतवार मान लेते हैं तो उनके समस्त सांसारिक भौतिक भय एवं दुखों का नाश स्वयं ही होने लगता है। यदि हम प्रभु की शरण में अपना सर्वस्व त्यागकर जीवन में आगे बढ़ते हैं तो परमात्मा हमेशा छाया की तरह हमारे साथ ही रहते हैं। मनुष्य ही इसे समझ नहीं पाता और वह अहंकार के नशे में स्वयं का कर्ताधर्ता मानने लगता है। गीता में लिखा है कि मृत्यु जीवन का विश्राम नहीं है। मृत्यु के भय से, भाग्य के सहारे हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाएं तो ईश्वर भी उससे दूर हो जाते हैं।

गीता में श्रीकृष्ण ने अपने उपदेश में कहा है कि ए मानव! निष्काम कर्म किये जा जिससे तू संसार के मोहपाश में न उलझकर पुरुषार्थ करता रह और आगे बढ़ता जा। सफलता तेरे पांव चूमेगी। गीता के द्वितीय अध्याय के अंत में 12 श्लोकों में स्थिर प्रज्ञ के लक्षण बताएं हैं। उदाहरणत: 'विहाय कामान्य: सर्वान्दुमांश्र्चरति नि:स्पृह:। निर्ममो निरहङ्कार स शांतिमधि गच्छति॥ अर्थात् जो पुरुष सम्पूर्ण कामनाओं को त्यागकर ममतारहित, अहंकार रहित और स्पृहारहित होकर विचरता है वही शांति को प्राप्त होता है अर्थात् ब्रह्मानंद को प्राप्त कर लेता है। (गीता अध्याय 2-71 श्लोक)

नेताजी : सुभाषचन्द्र बोस

पुण्यतिथि : 18 अगस्त पर शत्-शत् नमन

सुभाष चन्द्र बोस (जन्म : 23 जनवरी 1897, मृत्यु : 18 अगस्त 1945) जो नेता जी के नाम से भी जाने जाते हैं, भारत के स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी नेता थे। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान, अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने के लिये, उन्होंने जापान के सहयोग से आज़ाद हिन्द फौज का गठन किया था। उनके द्वारा दिया गया 'जय हिन्द' का नारा भारत का राष्ट्रीय नारा बन गया है। 'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हे आजादी दूंगा' का नारा भी उनका था जो उस समय अत्यधिक प्रचलन में आया। कुछ इतिहासकारों का मानना है कि जब नेता जी ने जापान और जर्मनी से मदद लेने की कोशिश की थी तो ब्रिटिश सरकार ने अपने गुप्तचरों को 1941 में उन्हें ख़त्म करने का आदेश दिया था। नेता जी ने 5 जुलाई 1943 को सिंगापुर के टाउन हाल के सामने 'सुप्रीम कमांडर' के रूप में सेना को संबोधित करते हुए दिल्ली चलो! का नारा दिया और जापानी सेना के साथ मिलकर ब्रिटिश व कामनवेल्थ सेना से बर्मा सहित इम्फाल और कोहिमा में एक साथ जमकर मोर्चा लिया। 21 अक्टूबर 1943 को सुभाष बोस ने आजाद हिन्द फौज के सर्वोच्च सेनापति की हैसियत से स्वतन्त्र भारत की अस्थायी सरकार बनायी जिसे जर्मनी, जापान, फिलीपींस, कोरिया, चीन, इटली और आयरलैंड ने मान्यता दी। नेताजी की मृत्यु को लेकर आज भी विवाद है। जापान में प्रतिवर्ष 18 अगस्त को उनका शहीद दिवस धूमधाम से मनाया जाता है वहीं भारत में रहने वाले उनके परिवार के लोगों का आज भी यह मानना है कि सुभाषचन्द्र बोस की मौत 1945 में नहीं हुई। वे उसके बाद रूस में नज़रबंद थे।

पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति

पुण्यतिथि : 23 अगस्त पर शत्-शत् नमन

पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति का जन्म 9 नवम्बर 1889 को पंजाब के जालंधर जिले के नवां शहर में हुआ था। आप स्वामी श्रद्धानंद जी के सुपुत्र थे। उनकी शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल कांगड़ी में हुई। अध्ययन के समय ही उन्हें सद्धर्म प्रचारक के सम्पादन का मौका मिला। यहीं से उनकी प्रवृति पत्रकारिता की ओर गयी। अपने जीवनकाल में उन्होंने विजय, वीर अर्जुन तथा जनसत्ता का सम्पादन किया। 'विजय' दिल्ली से प्रकाशित होने वाला पहला हिन्दी समाचार पत्र था। इनका देहावसान 23 अगस्त 1960 को दिल्ली में हुआ। इन्द्र जी ने शिक्षा तथा साहित्य सृजन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। शिक्षा के क्षेत्र में उनका सबसे महत्वपूर्ण योगदान गुरुकुल कांगड़ी का संचालन एवं मार्गदर्शन है। इस विश्वविद्यालय के कुलाधिपति के रूप में कार्य करते हुए उन्होंने गुरुकुल की उपाधियों को केन्द्र एवं राज्य सरकारों से मान्यता प्रदान कराने का स्तुत्य एवं सफल कार्य किया। गुरुकुल में हिन्दी माध्यम से तकनीकी विषयों की शिक्षण की व्यवस्था करके इन्होंने हिन्दी की अमूल्य सेवा की। ये इतिहास के गंभीर अध्येता थे। अत: इनकी इतिहास-विषयक रचनाएं अत्यन्त प्रामाणिक एवं उच्च श्रेणी की मानी गयीं हैं। भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का उदय और अन्त, मुगल साम्राज्य का क्षय और उसके कारण, मराठों का इतिहास उनकी सर्वप्रसिद्ध रचनाएं हैं।

पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय

पुण्यतिथि : 29 अगस्त पर शत्-शत् नमन

पंडित गंगा प्रसाद उपाध्याय आर्य समाजी लेखक थे। उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय में मेरठ कॉलेज के प्रोफेसर और गढ़वाल जिले के तेहरी में मुख्य न्यायाधीश के रूप में कार्य किया, जिसमें से वह आर्य समाज पूर्णकालिक सेवा करने के लिए सेवानिवृत्त हुए। आर्यसमाज के लब्धप्रतिष्ठ लेखक, दार्शनिक तथा साहित्यकार पं. गंगा प्रसाद उपाध्याय का जन्म 6 सितमबर 1881 को एटा जिले के नदरई नामक ग्राम में श्री कुंज बिहारीलाल के यहां हुआ। इन्होंने अंग्रेजी तथा दर्शनशास्त्र में क्रमश: 1908 तथा 1912 में किया। प्रारंभ में कुछ समय तक राजकीय स्कूलों में अध्यापन किया किंतु 1918 में वहां से त्यागपत्र देकर डीएवी हाई स्कूल इलाहाबाद में मुख्याध्यापक के पद पर आ गये। 1936 में इस कार्य से अवकाश लेने के पश्चात उपाध्याय जी ने सम्पर्ण जीवन को आर्य समाज के लिए ही समर्पित कर दिया। वे आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान पद पर 1941 से 1944 पर्यंत रहे। तत्पश्चात सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उप प्रधान (1943) तथा (1946-1951) भी रहे। इसी बीच आप धर्म प्रचारार्थ दक्षिण अफ्रीका, थाईलैंड व सिंगापुर गये। 1959 में दयानन्द दीक्षा शताब्दी के अवसर पर मथुरा में तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में आपका सार्वजनिक अभिनंदन किया गया तथा अभिनंदन ग्रंथ भेंट किया गया। अत्यंत वृद्ध हो जाने पर भी आप निरंतर अध्यन व लेखन में लगे रहे। 29 अगस्त 1968 को आपका निधन हो गया।

जियो और जीने दो !!!

अरुण लवानिया

नास्तिकों का यह नया तर्क है कि कोशिकाओं से ही पेड़ पौधे और जानवर बने हैं। इनका शरीर कुछ नहीं अपितु कोशिकाओं का सम्मिलित जोड़ है। नास्तिकों का नया ब्रह्मास्त्र है जिसके माध्यम से वो साबित करना चाह रहे हैं कि कोशिकायें चाहें पादप जगत की हों या जंतुओं की, दोनों की संरचना समान होने के कारण मनुष्य केवल कोशिकाएं ही खाता है। इसलिये मांसाहार और शाकाहार में कोई अंतर नहीं है। चाहे मांस खाओ या कंदमूल, खाई तो केवल कोशिकायें ही जा रही हैं। जिस चित्र को नास्तिक ने दिया वो ही स्पष्ट कर देता है कि दोनों प्रकार की कोशिकाओं में भिन्नता है। ये एक-समान नहीं हैं। इस तथ्य को वह चित्र में देख ही नहीं पाया। इस दावे को विज्ञान की सहायता से अमान्य करना इस पोस्ट का उद्देश्य है।

सर्वप्रथम तो पादप कोशिका और जंतु कोशिका एकसमान नहीं होतीं। दोनों में कई अर्थों में अंतर होता है। पादप कोशिकाओं में कोशिका झिल्ली (Cell membrane) के ऊपर कठोर कोशिका भित्ति (Cell wall) होती है। जबकि जंतुओं की कोशिका में केवल कोशिका झिल्ली ही होती है। अत: कोशिका भित्ति के अभाव के चलते यह कठोर नहीं होती है।

दोनों प्रकार की कोशिकाओं में माइटोकॉन्ड्रिया होता है परंतु केवल पादप कोशिका में ही क्लोरोप्लास्ट (Chloroplast) होता है, जहां प्रकाश संश्लेषण (Photosynthesis) से सूर्य के प्रकाश की ऊर्जा शुगर में रूपांतरित की जाती है जो पौधों के लिये भोजन है। साथ ही यह उन समस्त जानवरों के लिये भी भोजन है जो वनस्पतियों को खाते हैं। पादप कोशिका में एक अकेली बड़ी रिक्तिका (Vacuole) होती है जिसका उपयोग भंडारण और कोशिका के आकार को बनाये रखने के लिये होता है। जबकि जंतु कोशिका में अनेक छोटे-छोटे वैकुओल होते हैं। इसलिये विज्ञान के हिसाब से दोनों प्रकार की कोशिकायें एक जैसी नहीं होती हैं। इनमें भिन्नता होती है।

अब कथित नास्तिक के हास्यास्पद तर्क को ही आगे बढ़ाते हुये नास्तिक को सलाह है कि, चूंकि सूर्य ही इस धरा पर ऊर्जा का प्रथम स्रोत है, कोशिकाओं को छोड़ रोज सुबह नाश्ते, दोपहर भोजन के समय वो धूप में खड़ा होकर सूर्य की ऊर्जा खाये और जो भी अतिथि घर में आयें उन्हें भी धूप में खड़ा करवाकर यही खिलाये। ऐसा करने से शाकाहारी बनाम मांसाहारी विवाद का स्वत: अंत हो जायेगा। यदि फिर भी नास्तिकों के लिये पादप कोशिका और जंतु कोशिका में कोई अंतर नहीं है, और व्यक्ति मांस या शाक सब्जी नहीं केवल कोशिकायें ही खाता है तो, जब उसके मां-बाप, बेटा बेटी, पत्नी की मौत हो तो बजाय उनका शवदाह करने या कब्र में गाड़ने के शवों को ही खा ले। आखिर वो उसके सगे संबंधी ना होकर कोशिकाओं के समूह ही तो हैं। कोई पहाड़ थोड़ी ना टूट जायेगा। खा लें चाव से अपने सगे संबंधियों के शवों को कोशिकायें मात्र समझकर। लेकिन वो नास्तिक कदापि ऐसा नहीं करेगा क्योंकि शरीर मात्र कोशिकाओं का समूह ही नहीं होता है बल्कि इनसे परे उसमें चेतना होती है। तभी जीवन आता है, चलता है और अंत में चला जाता है। पौधों में तंत्रिका तंत्र और मस्तिष्क भी नहीं होता जैसा जानवरों में होता है। फिर भी जब कोई कीट पौधों की पत्ती खाना प्रारंभ करता है तो पौधा रासायनिक संकेत छोड़ता हुआ अन्य पत्तियां को अपने बचाव के लिये सावधान करता है।

फलस्वरूप दूसरी पत्तियां अपने बचाव के लिये उपयुक्त कदम उठाते हुये स्वयं को कडुआ या विषैला बना कीट से बचने का प्रयास करती हैं। पौधों के रासायनिक संकेत जानवरों के संकेतों से भिन्न होते हैं। जानवरों में तंत्रिका तंत्र और मस्तिष्क होने के कारण ये पादप जगत से भिन्न हो जाती हैं। तंत्रिका तंत्र विद्युत से संचालित होने के कारण तीव्र गति से संकेतों को मस्तिष्क में भेजती और वापस लाती हैं। साथ ही ध्वनि और शारीरिक संकेत भी देती हैं।

इसके विपरीत जब किसी पत्ती में यदि छेद किया जाये, काटा या नष्ट किया जाये तो यह कैल्सियम आयन की एक लहर चोटिल भाग से छोड़ती है जो, समुद्र की लहरों की भांति, पौधों के दूसरे हिस्सों में पहुंचती है। कैल्सियम आयन की इस लहर को उत्पन्न करने वाले अमीनो एसिड ग्लूटामेट (Glutamate) की पहचान वैज्ञानिकों द्वारा की जा चुकी है। इसके पूर्व पादप वैज्ञानिकों को मात्र इतना ही ज्ञात था कि पौधों के एक भाग में होने वाले परिवर्तनों को पौधे के दूसरे भाग अनुभव कर लेते हैं। ■■

नारी अधिकारों की तुलना

बाइबल और कुरआन दोनों ही महिला की कीमत पुरुष से लगभग आधी है। यहां बाइबल का क्या कहना है। (संदर्भ व्यव्यवस्था 27 : 3-7) और तेरा अनुमान पुरुष के बीस वर्ष से लेकर साठ साल की उम्र तक का होगा, यहां तक कि तेरा अनुमान पचास शेकेल चांदी का होगा और अगर यह एक महिला है, तो तेरा अनुमान तीस शेकेल होगा। और यदि यह पांच वर्ष से लेकर बीस वर्ष की आयु तक भी हो, तो तेरा अनुमान पुरुष के बीस शेकेल और स्त्री के दस शेकेल के लिए होगा।

यदि यह एक महीने की उम्र से लेकर पांच साल की उम्र तक का है, तो तेरा अनुमान पुरुष के पांच शेकेल चांदी का होगा, और मादा के लिए तेरा अनुमान चांदी के तीन शेकेल का होगा। अगर यह साठ साल की उम्र और ऊपर से हो, यदि वह नर है, तो अनुमान पंद्रह शेकेल और मादा दस शेकेल के लिए होगा। तो, उनकी उम्र के आधार पर, महिलाओं का मूल्य 1/2 से 2/3 है, जितना कि पुरुषों में।

कुरान क्या कहता है : अल्लाह तुम्हारी संतान के विषय में तुम्हें आदेश देता है कि दो बेटियों के हिस्से के बराबर एक बेटे का हिस्सा होगा और यदि दो से अधिक बेटियां हो तो उनका हिस्सा छोड़ी हुई सम्पत्ति का दो तिहाई है। और यदि वह अकेली हो तो उसके लिए आधा है। -कुरान 4:11। अगर कोई ऐसा शख्स मर जाए कि उसके न कोई लड़का हो (न मां-बाप) और उसके एक बहन हो तो उसका आधा होगा। -कुरान 4:176। कुरान हमें बताता है कि हमें एक महिला की गवाही पर कितना भरोसा करना चाहिए- यह एक आदमी के आधे लायक है। अपने लोगों में से जिन लोगों को तुम गवाही लेने के लिये पसंद करो (कम से कम) दो मर्दों की गवाही कर लिया करो फिर अगर दो मर्द न हो तो (कम से कम) एक मर्द और दो औरतें (क्योंकि) उन दोनों में से अगर एक भूल जाएगी तो एक दूसरी को याद दिला देगी, -कुरान 2:282

मनुस्मृति में नारी जाति : पिता, भाई, पति या देवर को अपनी कन्या, बहन, स्त्री या भाभी को हमेशा यथायोग्य मधुर-भाषण, भोजन, वस्त्र, आभूषण आदि से प्रसन्न रखना चाहिए और उन्हें किसी भी प्रकार का क्लेश नहीं पहुंचने देना चाहिए। -मनुस्मृति 3/55। अर्थात् जिस समाज या परिवार में स्त्रियों का सम्मान होता है, वहां देवता अर्थात् दिव्यगुण और सुख-समृद्धि निवास करते हैं और जहां इनका सम्मान नहीं होता, वहां अनादर करने वालों के सभी काम निष्फल हो जाते हैं। मनुस्मृति 3/56। जिस कुल में स्त्रियां अपने पति के गलत आचरण, अत्याचार या व्यभिचार आदि दोषों से पीड़ित रहती हैं। वह कुल शीघ्र नाश को प्राप्त हो जाता है और जिस कुल में स्त्री-जन पुरुषों के उत्तम आचरणों से प्रसन्न रहती हैं, वह कुल सर्वदा बढ़ता रहता है। जो पुरुष, अपनी पत्नी को प्रसन्न नहीं रखता, उसका पूरा परिवार ही अप्रसन्न और शोकग्रस्त रहता है और यदि पत्नी प्रसन्न है तो सारा परिवार प्रसन्न रहता है। - मनुस्मृति 3/62। पुरुष और स्त्री एक-दूसरे के बिना अपूर्ण हैं, अत: साधारण से साधारण धर्मकार्य का अनुष्ठान भी पति-पत्नी दोनों को मिलकर करना चाहिए। -मनुस्मृति 9/96

ऐश्वर्य की कामना करने हारे मनुष्यों को योग्य है कि सत्कार और उत्सव के समयों में भूषण वस्त्र और भोजनादि से स्त्रियों का नित्यप्रति सत्कार करें। पुत्र-पुत्री एक समान। आजकल यह तथ्य हमें बहुत सुनने को मिलता है। मनु सबसे पहले वह संविधान निर्माता है जिन्होंने जिन्होंने पुत्र-पुत्री की समानता को घोषित करके उसे वैधानिक रुप दिया है- 'पुत्रेण दुहिता समा' (मनुस्मृति 9/130) अर्थात्-पुत्री पुत्र के समान होती है। पुत्र-पुत्री को पैतृक सम्पत्ति में समान अधिकार है।

पुरुषों को निर्देश है कि वे माता, पत्नी और पुत्री के साथ झगड़ा न करें। मनुस्मृति 4/180 इन पर मिथ्या दोषारोपण करने वालों, इनको निर्दोष होते हुए त्यागने वालों, पत्नी के प्रति वैवाहिक दायित्व न निभानेवालों के लिए दंड का विधान है। मनु की एक विशेषता और है, वह यह कि वे नारी की असुरक्षित तथा अमर्यादित स्वतंत्रता के पक्षधर नहीं हैं और न उन बातों का समर्थन करते हैं जो परिणाम में अहितकर हैं। इसीलिए उन्होंने स्त्रियों को चेतावनी देते हुए सचेत किया है कि वे स्वयं को पिता, पति, पुत्र आदि की सुरक्षा से अलग न करें, क्योंकि एकाकी रहने से दो कुलों की निंदा होने की आशंका रहती है।

■ **प्रस्तुति : हेमन्त शर्मा**

स्वतंत्रता दिवस, श्रावणी पर्व और योगेश्वर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी की हार्दिक शुभकामनाएं

आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम नोएडा द्वारा समस्तजनों को स्वतंत्रता दिवस, श्रावणी पर्व, योगेश्वर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर हर प्रकार की सुख, समृद्धि, स्वास्थ्य और शांति की कामना से परिपूर्ण बधाई। स्वतंत्रता दिवस, श्रावणी पर्व, योगेश्वर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी आर्यों के लिए ईश्वर भक्ति के मार्ग की सर्वोच्च प्रेरणा बने, ऐसी परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है।

■ **प्रबंध संपादक**

वेद का अध्ययन आज भी प्रासंगिक है

यह इतिहास सम्मत तथ्य है कि वेद संसार के सर्वाधिक प्राचीन धर्म ग्रंथ है। इनका अविर्भाव काल (भारतीय आस्था के अनुसार) या रचनाकाल अनिर्णित है। प्रो. मैक्समूलर जैसे वेदज्ञ का कहना था कि ऋग्वेद के रचनाकाल का निर्धारण अभी संभव नहीं है। तब प्रश्न होता है कि क्या मात्र प्राचीनता ही वह कसौटी है, जो किसी ग्रंथ को सर्वसामान्य के लिए उपयोगी तथा प्रासंगिक ठहराती है। वेदों का अर्थ निर्धारण करने के लिए प्राय: दो पद्धतियां अपनाई जाती हैं। प्रथम है भारत के मध्यकालीन विद्वानों का यह विचार कि वेद मंत्रों की रचना प्राचीन आर्यों ने अपने यज्ञादि कर्मकांडों को निष्पन्न करने के लिए की थी। वे मनु का प्रमाण देकर कहते हैं कि वेद त्रयी (ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद) यज्ञ की सिद्धि के लिए ही इन वेदों का प्रादुर्भाव हुआ। इसके विपरीत मैक्समूलर, ग्रिफिथ, राथ, विल्सन, मैकडानल आदि पाश्चात्य वेदज्ञों ने वेदों का अध्ययन ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में किया। उनके अनुसार मध्य एशिया से आकर जब आर्य लोग गंगा यमुना के प्रांत भाग तथा पांच नदियों के सारस्वत प्रांत में आकर बस गए और यहां के निवास काल में उनके विचारों, जीवन पद्धति तथा उनके आचार-विचार व्यवहार आदि का विश्वसनीय विवरण इन वेदों में देखा जा सकता है।

उपर्युक्त दोनों विचारों से भिन्न एक अन्य पद्धति है जो यह मानती है कि वेदों की रचना मानव के सार्वत्रिक अभ्युत्थान का मार्ग दिखाने की दृष्टि से हुई है। इस विचार को वेद मीमांसक मानते हैं कि वेदों में ऐसी शिक्षाएं हैं जो व्यक्ति के शरीर, मन, बुद्धि तथा आत्मा के उत्थान का मार्ग प्रशस्त करती हैं। साथ ही उसके पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, यहां तक कि निखिल मानवता को उत्कर्ष पर ले जाने के लिए मार्गदर्शन करती हैं। यह तो सत्य है कि मनुष्य की व्यक्ति से भिन्न एक सामाजिक भूमिका भी है। वह अंग्रेजी उपन्यास के पात्र रोबिन्सन क्रूसो की भांति किसी अज्ञात द्वीप में एकाकी जीवन व्यतीत नहीं करता है। परिवार, समाज और राष्ट्र में रहकर वह अपने समस्त जीवन को व्यतीत करता है।

इस दृष्टि से यदि हम वेदों का अध्ययन करें तो इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि इन ग्रंथों में मानव की व्यक्तिगत, साथ ही उसकी समूहगत उन्नति के विविध उपाय वर्णित किए गए हैं। प्रथम, मनुष्य का व्यक्तिगत (शरीर से आरंभ कर मन, बुद्धि तथा चैतन्य (आत्मा) उन्नति के लिए निर्दिष्ट संकेतों की चर्चा करें तो देखते हैं कि वेद ने मानव शरीर में देवभूमि अयोध्या (कभी पराजित न होने वाली) कहा है। अष्टचक्रा नवद्वारा देवनापुरी। अथर्ववेद में यही माना है। इस देवभूमि में जो ज्ञानेन्द्रियां तथा कर्मेन्द्रियां हैं, उनका सम्यक् विकास तथा अभिवृद्धि वेद का दृष्ट है। इसलिए वेद कहता है- भद्रं कर्णेभि: श्रृणुयाम् देवा। हम कानों से भद्र वाणी सुनें तथा भद्रंपश्येम अक्षिभि नेत्रों से भद्र, भव्य तथा मंगल विधायक दृश्यों को देखें।

यजुर्वेद का प्रसिद्ध मंत्र तच्चक्षुर्देवहितं संकेत करता है कि मनुष्य सौ वर्ष पर्यन्त, पदाचित उससे अधिक भी स्वस्थ जीवन व्यतीत करे। उसके नेत्र, कान, वाणी आदि स्वस्थ रहें तथा वह निर्भीक होकर निरुपद्रव जीवन व्यतीत करे। मनुष्य का शरीर दृढ़, बलवान तथा सुसंगठित हो, वेद का कथन है- अश्मा भवतुते तनू: तुम्हारा शरीर पत्थर के समान सुदृढ़ हो। मानव शरीर मात्र भौतिक इकाई ही नहीं है। उसमें मन, बुद्धि, अस्मिता आदि सूक्ष्म उपकरण भी हैं। मन को तो शास्त्रों ने बंधन एवं मोक्ष का कारण माना है- मन एव मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षयो। मनुष्य का मन कल्याणकारी संकल्पों वाला हो, इसे यजुर्वेद के शिवसंकल्प मंत्रों में भली भांति निर्दिष्ट किया है। शिवसंकल्प के ये छह मंत्र मानव के मनोविज्ञान को स्पष्ट करते हैं। इन मंत्रों में मन के दिव्य कर्मों का विवेचन है तथा मन को ज्योतियों में दिव्य ज्योति, दूर तक चला जाने वाला, सब प्रकार के कर्मों का नियन्ता बताकर एक ऐसा सारथी बताया है जो अपने इंद्रिय रूपी घोड़ों को कभी पथ से विचलित होने नहीं देता। मन को सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा देने वाली बुद्धि है। जिसके लिए वेदों में मेधा तथा प्रज्ञा जैसे शब्दों का प्रयोग हुआ है। बुद्धि को प्रशस्त करने, उसे सन्मार्ग पर चलाने की प्रेरणा के लिए मनुष्य सविचा (सर्वसृष्टि को उत्पन्न करने वाला) देव से प्रार्थना करता है। यही प्रसिद्ध मंत्र गायत्री या सावित्री मंत्र कहलाता है। वेदों में निरंतर प्रार्थना है कि हम देवताओं की सद्बुद्धि को प्राप्त करें। यहां प्रार्थना की गई है- 'देवानां भद्रा सुमति' को हम प्राप्त करें। साथ ही तेजस्वी परमात्मा से हमारी प्रार्थना है कि- जो मेधा बुद्धि आपने हमारे पूर्वज ऋषियों तथा पितरों को प्राप्त कराई, उससे हमें भी उपकृत करें।

■ डॉ. भवानी लाल भारतीय

धर्म क्या है...?

धर्म वह है जो मनुष्य मात्र का कल्याण करने में समर्थ हो, किसी व्यक्ति या वर्ग विशेष का नहीं। धर्म वह है जो जीवन के सर्वांगीण विकास का मार्ग प्रशस्त करे। बौद्धिक, आत्मिक, शारीरिक, सामाजिक, राष्ट्रीय उन्नति के लिए प्रेरणा दे, जिसमें समानता, एकता, परस्पर प्रेम, सौहार्द, सद्भावना, समदृष्टि उत्पन्न करने की क्षमता हो, जो कर्तव्य पालन के प्रति सचेत करे। ऐसे धर्म को धारण करके मनुष्य का इहलोक भी सुधर सकता है और परलोक भी। धर्म के प्रति यह दार्शनिक दृष्टिकोण कितना उदात्त व विशाल है।

यतोऽभ्युदयनिः श्रेयसस्सिद्धि स धर्मः ।।

जिससे लौकिक और पारलौकिक उन्नति हो,वही धर्म है। पारलौकिक उन्नति से अभिप्राय आत्मिक और पारमार्थिक उन्नति है, अर्थात् केवल भौतिक उन्नति ही जीवन के लिए आवश्यक नहीं है अपितु आत्मिक उन्नति की आवश्यकता उससे भी कहीं अधिक है। भौतिक उन्नति शरीर के लिए है और आत्मिक उन्नति आत्मा के लिए है। दोनों प्रकार की उन्नति ही मनुष्य के लिए महत्वपूर्ण है।

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
दानं दमो दया क्षान्तिः सर्वेषां धर्मसाधनम्।।

अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), पवित्रता, इन्द्रियों का संयम, दान, अंत:करण का संयम, दया और धैर्य धारण करना ये सभी व्यक्तियों के लिए धर्म के साधन हैं।

नाश्रमः कारणं धर्मे क्रियमाणे भवेद्धि सः।
अतो यदात्मनोऽपथ्यम् परेषां न तदाचरेत्।।

किसी धर्म के आचरण में कोई विशेष आश्रम कारण नहीं है, वह तो करने से होता है। इसलिए जो अपने को न रुचे (अच्छा न लगे) वह दूसरों के लिए नहीं करना चाहिए।

- मनुष्य को सदा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जिसका सेवन रागद्वेष रहित विद्वान लोग नित्य करें, जिसको आत्मा सत्कर्तव्य जाने, वही धर्म माननीय और करणीय है। सम्पूर्ण वेद, स्मृति, तथा ऋषिप्रणीत शास्त्र, सत्पुरुषों का आचार और जिस कर्म में अपनी आत्मा प्रसन्न रहे अर्थात् जिन कर्मों को करने में भय, लज्जा, शंका न हो, उन कर्मों का सेवन करना उचित है।
- क्योंकि जो मनुष्य वेदोक्त धर्म और वेद से अविरुद्ध स्मृति में कहे गये धर्म का अनुष्ठान करता है,वह इस लोक में कीर्ति और मरकर सर्वोत्तम सुख को प्राप्त होता है।
- परंतु जो द्रव्यों के लोभ और काम अर्थात् विषय सेवन में फंसा हुआ नहीं होता, उसी को धर्म का ज्ञान होता है। जो धर्म को जानने की इच्छा करें, उनके लिए वेद ही परम प्रमाण है। सत्य बोलो, प्रिय बोलो। अप्रिय सत्य न बोलो, प्रिय असत्य न बोलो। यही सनातन धर्म है। जो लोग सुंदर चाल चलन वाले हैं, जो सदा प्रयत्नशील हैं, जो जप और हवन नित्य करते हैं, उनको कोई कष्ट नहीं होता।
- धर्माचरण से ही दीर्घायु, उत्तम प्रजा और अक्षय धन मनुष्य को प्राप्त होता है और धर्माचरण बुरे अधर्मयुक्त लक्षणों का नाश कर देता है। जो दुराचारी पुरुष होता है वह सर्वत्र निन्दित, दु:खभागी और व्याधि से निरंतर अल्पायु हो जाता है। जो अधार्मिक मनुष्य है और जिसका अधर्म से संचित किया हुआ धन है,जो सदा हिंसा अर्थात् वैर में प्रवृत्त रहता है, वह इस लोक और परलोक में सुख को कभी प्राप्त नहीं हो सकता।
- धर्माचरण करते हुए द:ख मिलने पर भी अधर्म में मन को न लगावे, क्योंकि अधार्मिक पापीजनों को शीघ्र ही विपरीत अर्थात् दु:ख भी मिलता देखा जाता है।
- मनुष्य निश्चय करके जाने कि इस संसार में जैसे कि गाय की सेवा का फल दूध आदि शीघ्र नहीं होता, वैसे ही किये हुए अधर्म का फल भी शीघ्र नहीं होता, किन्तु धीरे-धीरे अधर्मकर्ता के सुखों को रोकता हुआ सुख के मूलों को काट देता है।
- अधर्मात्मा पुरुष धर्म की मर्यादा को तोड़कर विश्वासघात आदि कर्मों से पराये पदार्थों को लेकर प्रथम बढ़ता है, धनादि ऐश्वर्य से खान पान, वस्त्र, आभूषण, स्थान, मान, प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है, अन्याय से शत्रुओं को भी जीतता है, परन्तु शीघ्र ही नष्ट हो जाता है जैसे जड़ से कटा हुआ पेड़ नष्ट हो जाता है।
- जैसे दीमक धीरे-धीरे बड़े भारी घर को बना लेती है, वैसे ही मनुष्य परजन्म के सहाय के लिए सब प्राणियों को पीड़ा न देकर धर्म का संचय धीरे-धीरे किया करे। परलोक में न माता, न पिता, न पुत्र, न स्त्री, न संबंधी सहाय कर सकते हैं, किंतु एक धर्म ही सहायक होता है।

Environmental Ethos In Vedic Times

Article by Kamla Nath Sharma

Today, the natural resources of the earth are being mindlessly exploited globally far beyond need, resulting in a poor state of their regeneration and causing irreversible damage to the planet. This year's World Environment Day theme- 'Seven billion dreams. One planet. Consume with care' - therefore, is highly relevant. Starting from space, a Vedic mantra, 'prithivy apah tejah vayuh akashat' depicts sequential primal appearance of the five basic gross substances, called 'panch mahabhuta' - namely, space, air, fire or energy, water and earth-from which all universal matter is created. Water has enjoyed the highest social and religious status in ancient Indic culture.

Prayers in all four main Vedas refer to water as nectar, honey, source of life, protector of earth and environment, cleanser of sins, generator of prosperity and ambrosia. Sages in Yajur Veda pray thus, 'O Water, thou art the reservoir of welfare and propriety, sustain us to become strong. We look up to thee to be blessed by thy kind ambrosia on this earth. O water, we approach thee to get rid of our sins.' Rivers were considered divine and worshipped as goddesses and people were ordained to use their life-sustaining waters most judiciously and with greatest reverence. Today, we have lost sight of the fact that the resources are finite. Of all of earth's water, only 0.007% is accessible for human use. Today, globally more than 1.1 billion people have inadequate availability of water.In Vedic cosmology, Prithvi or earth symbolises material base as mother and the Dyaus, upper sky or heaven, symbolises the unmanifested immortal source as father, which together and between them, provide paryav aran, the environment.

An Atharva Veda hymn says, 'Mata bhoomih putroham prithivyaah,'reminding us of our responsibility not only towards our motherland but also to Planet Earth. The mantra refers to earth differently as 'bhoomi' and 'prithvi' implying that while my motherland is my mother, i am also a child of Planet Earth. The Yajur Veda addresses Prithvi as a guardian, praised for being benevolent to humankind, and is prayed to for continued protection: 'O Earth! Fill up your broad heart with the vital healing air, waters and flora. May the benevolent lifegiving air circulate for a bountiful Earth. Another prayer says, Pleasant be you to us, O Earth, without a thorn be our habitation. sustenance. In hymns of the Rig Veda, seers seek blessings of the sun and wish every part of the earth to be prosperous and mountains, waters, and rivers to be propi tious.

The importance of vital healing air, fresh unpolluted waters and healthy flora on earth was recognised and wished for in the hymns of the Atharva Veda. Nature and its seasons are governed cosmic laws of integration and balance, called 'Rit' in the vedas. Keeping an eye on Rit, human activities can be directed to global sustainable development.A hymn of the Yajur Veda says, 'O learned people, fully realise your conduct towards different objects of the universe.' But, in today's world we are misusing scientific and technological breakthroughs to indiscreetly and greedily exploit natural resources, thereby causing imbalances that make it difficult to maintain natural harmony.

सुनो आर्यो!!

सदियों से बहता रक्त तुम्हारा-
शहरों की खिचपिच राहों पर।

बच्चों के शीश टंगे भाले पर-
अस्मत लुटी चौराहों पर।

आज तेरी बर्बादी की साजिश-
रोम- अरब की मीनारों में।

फैला आतंक और लव जिहाद-
गलियों में, बाजारों में।

न आए कृष्ण न राम धनुर्धर,
न दुर्गा काली खप्पर वाली।

न पवनपुत्र बजरंगबली-
न महादेव शिव शक्तिशाली।

संदेश साफ है, समझ सको तो-
शक्ति अपनी बढ़ानी होगी!

राम-कृष्ण सा बन करके-
खुद शमशीर उठानी होगी!!

ऊंचनीच और जातपात के,
झगड़े सभी मिटा करके-

लुटता घर बचाने को-
अब शमशीर उठानी होगी।

ईसा मूसा के छल से-बल से,
जो अटक गए जो भटक गए,

उनको गले लगा करके-
अब शमशीर उठानी होगी।

➲ डॉ. नरेन्द्र वेदालंकार

जय हो देव दयानन्द की

जय हो देव दयानन्द की, आनंद की करुणानंद की।
जय हो देव दयानन्द की, आनंद की करुणानंद की।
करशन जी घर निकला सूरज, धन्य हो गई टंकारा रज।
नाम था उसका शंकर मूल, शारीरिक शौष्ठव ज्यों फूल।
शिवरात्रि का पर्व था आया, पिता ने व्रत उपवास कराया।
बालक मूल बहुत हर्षाया, दर्शन को था जी ललचाया।
भारी भीड़ भरा था मेला, उत्सुकतावश खड़ा अकेला।
पंडित जी ने शंख बजाया, लोगों ने फल-फूल चढ़ाया।
पूजन कर सो गए नर-नारी, लेकिन जगा रात वह सारी।
देखी घटना उसने न्यारी, शोर हुआ चूहों का भारी।
चूहों ने मिल भोग लगाया, मूल, मूल को नज़र न आया।
कैसा शिव करवट न लेता, रक्षा निज कर भगा न देता।
सच्चा शिव कोई और है, जो जग का शिरमौर है।
घर आकर उपवास को तोड़ा, सच्चे शिव की खोज में दौड़ा।
फिर देखी घर में दुर्घटना, कहां गए चाचा, कहां गई बहिना।
अभी-अभी जो खड़े यहां, आखिर दोनों गए कहां।
कोई दैवीय शक्ति है, जो मुझको न दिखती है।
देख मूल की व्याकुलता को, हुई निराशा मात-पिता को।
करने लगे विवाह तैयारी, पल्ले बांधो इसके नारी।
मगर मूल को चैन कहां था, लिए प्रश्न बेचैन यहां था।
चकमा देकर निकल गया वह, सिद्ध मेले में पकड़ गया वह।
एक बार फिर से आजमाया, कामयाब अपने को पाया।
घूमे मथुरा, काशी, काबा, मिले अनेकों साधु बाबा।
माला, झोली, तिलक लगाया, लेकिन दिल को चैन न आया।
पूर्णानंद मिले संन्यासी, प्राणायाम, योग, अभ्यासी।
जमकर आसन योग लगाया, 'शुद्ध चैतन्य' बन निखरी काया।
मिली और आशा की दस्तक, हर्षित रोम-रोम व रग-रग।

➲ विमलेश बंसल 'आर्या'

वैदिक संस्कार क्यों किये जाते हैं...

1. **गर्भाधान संस्कार** : युवा स्त्री–पुरुष उत्तम संतान की प्राप्ति के लिये विशेष तत्परता से प्रसन्नतापूर्वक गर्भाधान करे।
2. **पुंसवन संस्कार** : जब गर्भ की स्थिति का ज्ञान हो जाए, तब दुसरे या तीसरे महीने में गर्भ की रक्षा के लिए स्त्री व पुरुष प्रतिज्ञा लेते है कि हम आज ऐसा कोई कार्य नहीं करेंगे जिससे गर्भ गिरने का भय हो।
3. **सीमन्तोन्नयन संस्कार** : यह संस्कार गर्भ के चौथे मास में शिशु की मानसिक शक्तियों की वृद्धि के लिए किया जाता है इसमें ऐसे साधन प्रस्तुत किये जाते है जिससे स्त्री प्रसन्न रहें।
4. **जातकर्म संस्कार** : यह संस्कार शिशु के जन्म लेने पर होता है। इसमें पिता सलाई द्वारा घी या शहद से जिह्वा पर ओ३म् लिखते हैं और कान में 'वेदोऽसि' कहते हैं।
5. **नामकरण संस्कार** : जन्म से ग्यारहवें या एक सौ एक या दूसरे वर्ष के आरम्भ में शिशु का नाम प्रिय व सार्थक रखा जाता है।
6. **निष्क्रमण संस्कार** : यह संस्कार जन्म के चौथे माह में उसी तिथि पर जिसमें बालक का जन्म हुआ हो किया जाता है। इसका उद्देश्य शिशु को उद्यान की शुद्ध वायु का सेवन और सृष्टि के अवलोकन का प्रथम शिक्षण है।
7. **अन्नप्राशन संस्कार** : छठें व आठवें माह में जब शिशु की शक्ति अन्न पचाने की हो जाए तो यह संस्कार होता है।
8. **चूड़ाकर्म (मुंडन) संस्कार** : पहले या तीसरे वर्ष में शिशु के बाल कटाने के लिये किया जाता है।
9. **कर्णवेध संस्कार** : कई रोगों को दूर करने के लिए शिशु के कान बींधे जाते है।
10. **उपनयन संस्कार** : जन्म से आठवें वर्ष में इस संस्कार द्वारा लड़के व लड़की को यज्ञोपवीत पहनाया जाता है।
11. **वेदारम्भ संस्कार** : उपनयन संस्कार के दिन या एक वर्ष के अन्दर ही गरुकुल में वेदों के अध्ययन का आरम्भ किया जाता है।
12. **समावर्तन संस्कार** : जब ब्रह्मचारी व्रत की समाप्ति कर वेद–शास्त्रों के पढ़ने के पश्चात गुरुकुल से घर आता है तब यह संस्कार होता है।
13. **विवाह संस्कार** : विद्या प्राप्ति के पश्चात् जब लड़का–लड़की भली भांति पूर्ण योग्य बनकर घर जाते है तब दोनों का विवाह गुण–कर्म–स्वभाव देखकर किया जाता है।
14. **वानप्रस्थ संस्कार** : जब घर में पुत्र का पुत्र हो जाए, तब गृहस्थ के धंधे को छोड़कर वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश किया जाता है।
15. **संन्यास संस्कार** : वानप्रस्थी वन में रह कर जब सब इन्द्रियों को जीत ले, किसी में मोह व शोक न रहे तब संन्यास आश्रम में प्रवेश किया जाता है।
16. **अन्त्येष्टि संस्कार** : मनुष्य शरीर का यह अंतिम संस्कार है जो मृत्यु के पश्चात् शरीर को जलाकर किया जाता है।

यह संक्षेप में 16 वैदिक संस्कारों का प्रयोजन बताया है। इन सोलह संस्कारों की विज्ञानिक ता और महानता को विस्तार में जानने के लिए पुस्तक 'संस्कार विधि' पढ़ें।

'विद्या दान सबसे बड़ा दान है'

आर्ष गुरुकुल, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा "आर्ष गुरुकुल शिक्षा प्रबंध समिति (पं)" द्वारा संचालित वैदिक शिक्षा का उत्कृष्ट केंद्र, आर्य समाज बी-69, सेक्टर-33, नोएडा में स्थापित पिछले 27 वर्षों से ब्रह्मचारियों को विद्वान बना रहा है। जो आर्य समाज के प्रचार-प्रसार में सहयोग कर रहे हैं। इस समय 108 ब्रह्मचारी शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। आर्ष गुरुकुल के प्रधानाचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार के नेतृत्व में दिन-रात चौगुनी उन्नति की ओर अग्रसर गुरुकुल को सहयोग देकर 'विद्या दान सबसे बड़ा दान है' में सहयोगी बनें। संस्था में निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था है। केवल भोजन शुल्क ही लिया जाता है। कृपया उदार हृदय से आप सहयोग 'यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया', नोएडा सेक्टर-33 में खाता संख्या A/C No. 1483010112345, IFSC- UTB10SCN560 में भेजकर सूचित करें ताकि आपको पावती (रसीद) भेजी जा सके। 'आर्ष गुरुकुल को दी जाने वाली राशि आयकर की धारा 80जी के अंतर्गत कर मुक्त है।' धन्यवाद!

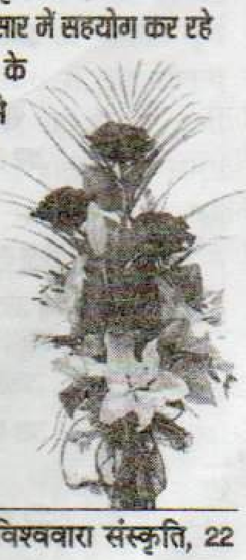

(आर्य कै. अशोक गुलाटी)

प्रबंध संपादक, 'विश्ववारा संस्कृति', मो. : 9871798221, 7011279734

आर्य समाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा, (उप्र)

पं. चमूपति जी के स्वामी दयानन्द के प्रति प्रेरणादायक उद्गार

पं. चमुपति जी लिखते हैं कि आज केवल भारत नहीं सारे संसार पर स्वामी दयानन्द का सिक्का है। मतों के प्रचारकों ने अपने मंतव्य बदल लिए हैं, धर्म पुस्तकों का संशोधन किया है, महापुरुषों की जीवनियों में परिवर्तन किया है। स्वामी जी का जीवन इन जीवनियों में बोलता है। ऋषि मरा नहीं करते, अपने भावों के रूप में जीते हैं।

- दलितोद्दार का प्राण कौन है? पतित पावन स्वामी दयानन्द।
- समाज सुधार की जान कौन है? आदर्श सुधारक स्वामी दयानंद।
- शिक्षा के प्रचार की प्रेरणा कहां से आती है? गुरुवर महर्षि स्वामी दयानन्द के आचरण से।
- वेद का जय-जयकार कौन पुकारता है? ब्रम्हर्षि स्वामी दयानन्द।
- माता आदि देवियों के सत्कार का मार्ग कौन सिखाता है? देवी पूजक महर्षि स्वामी दयानन्द।
- गोरक्षा के विषय में प्राणिमात्र पर करुणा दिखाने का बीड़ा कौन उठाता है? करुणानिधि दयानन्द।

आओ हम अपने आप को ऋषि दयानन्द के रंग में रंगे। हमारा विचार ऋषि का विचार हो, हमारा अचार ऋषि आचार हो, हमारा प्रचार ऋषि का प्रचार हो। हमारी प्रत्येक चेष्टा ऋषि की चेष्टा हो। नाड़ी-नाड़ी से ध्वनि उठे।

महर्षि दयानन्द पापों और पाखंडों से ऋषि राज छुड़ाया था तूने। भयभीत निराश्रित जाति को, निर्भिक बनाया था तूने।। बलिदान तेरा था अदिव्तीय हो गई दिशाएं गुंजित थी। जन-जन को देगा प्रकाश वह दीप जलाया था तूने।।

हमारा सौभाग्य है और अपने इस सौभाग्य पर हमें गर्व है कि हम महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित ईश्वरीय ज्ञान वेदों के अनुयायी हैं। महर्षि दयानन्द द्वारा प्रदर्षित मार्ग ऐहिक व पारलौकिक उन्नति अथवा अभ्युदय व नि:श्रेयस प्राप्त कराता है। इसे यह भी कह सकते है कि वेद मार्ग योग का मार्ग है। जिस पर चलकर धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति होती है। संसार की यह सबसे बड़ी सम्पदाये हैं। अन्य सभी भौतिक सम्पदाये तो नाशवान हैं परंतु दयानन्द जी द्वारा दिखाई व दिलाई गई सम्पदाये जीते जी तो सुख देती हैं मरने के बाद भी लाभ ही लाभ पहुंचाती है। ■■

आत्मजोत काव्य के माध्यम से पंडित जी स्वामी दयानन्द की श्रद्धांजलि देते हैं

लगे मेरे स्वामी को छाले सताने। लगे बीसियों दस्त उन्हें जोर आने॥
किया जहर का काम उल्टा दवा ने। न आई तबिअत, न आई ठिकाने॥
ऋषिवर की किस्मत के थे फेर उल्टे। मुआलज थे हमराज़ सब नन्हीं जां के॥
रहे दस्त पर दस्त हर रोज जारी। लगी बेहोशी रह-रह के तारी॥
हरारत से बढ़ती गई बेकरारी। ऋषि की हुई लागू शामत हमारी॥
फफोले उठे नाफ़ से थे ज़बां तक। ज़िगर से यही सोज़ पहुंचा था जां तक॥
वोह स्वामी जो हाथी की ताकत था रखता। उठी तेग को हाथ से टुकड़े करता॥
था बेख़ौफ़ राजों के सिर पर गर्जता। था लाचार खटिया पै आज आह! लेटा॥
तड़पते कटीं दर्द से सत्रह रातें। न आराम आया जरा जोधपुर में॥
लगे कहने स्वामी चलीं कोह आबू। नहीं चैन आने का या कोई पहलू॥
हवा में होता है पहाड़ों की जादू। कहीं रोग का मेरे शायद हो दारु॥
लगे राजा रोने कटी नाक मेरी। ऋषि जो गये राज से मेरे रोगी॥
ऋषि को सुलाया गया पालकी में। था डूबा खड़ा राजा शर्मिन्दगी में॥
न रखा दकीका उठा बन्दगी में। कहा पाओं पर गिर के अरमां है जी में॥
जो सेहत में करता ऋषिवर को रुख़सत। न यूं पाओं पड़ने में होती नदामत॥
किसी डाक्टर ने जो स्वामी को देखा। कहा तेरा साधु जिगर है ग़ज़ब का॥
तू इस दर्द में है ज़मीयत से जीता। नहीं उफ़ ज़बां से तिरी कोई सुनता॥
गये कोह आबू से अजमेर स्वामी। इशारे में करते थे शीरीं कलामी॥
कहा एक दिन कोई नाईं बुलाओ। हमें आज पानी से मिलकर नहाओ॥
जो खाना कि हो सबसे शीरीं पकाओ। हलावत का इक ख़ांनचा भरके लाओ॥
थे सब शुक्र करते, है हाल आज अच्छा। खबर क्या? संभाला था बीमार लेता॥
नहा कर जमाया ऋषिवर ने आसन। हुए ध्यान में महव खुलवा के रोज़न॥
सुरें वेद की मीठी-मीठी नवाज़न। पकड़ती थी अनवारे रहमत जा दामन॥
रज़ा पर कहा तेरी साईं! हू राजी। वोह लो! आत्मा सांस के साथ चलदी॥
ऋषि चैन से आख़री नींद सोया। था चेहरे पै नूर अब भी उसके चमकता॥
गुरुदत्त कि रखते थे ईमान बोदा। समां देखकर उन पै छाया अचम्भा॥
कहा मर के भी तुम नहीं स्वामी मरते। हैं मुर्दार हम जैसे मरने से डरते॥
ज़मी आई कहती यह मिट्टी है मेरी। ख़ला में ख़ला, बाद में बाद पहुंची॥
यह कहती हुई आग वेदी से उठी। हमारा महर्षि! हमारा महर्षि॥
किया मौत ने तेरी हर सू उजाला। दयानन्द स्वामी! तिरा बोल बाला॥

समाचार - सूचनाएं

- युवा क्रांतिकारी संन्यासी स्वामी आदित्यवेश जी की प्रेरणा तथा निर्देशन में नजफगढ़ क्षेत्र के 36 गांव में विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया।
- आर्य समाज हापुड़ के सत्संग भवन के सुसज्जित पुनर्निर्माण के लोकार्पण का कार्यक्रम भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ और आर्य धमार्थ होम्योपैथिक औषधालय का भी उद्घाटन किया गया। इस कार्यक्रम में सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की तथा संसद सदस्य डॉ. सत्यपाल सिंह जी रहे। मुख्य अतिथि तथा युवा संन्यासी स्वामी आदित्यवेश जी मुख्य वक्ता रहे।
- यूजीसी द्वारा 19वीं एवं 20वीं शताब्दी के दार्शनिकों की सूची में युग प्रवर्तक तथा महान दार्शनिक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का नाम न होने पर पूरे आर्य जगत में भारी रोष तथा असंतोष का वातावरण व्याप्त है। पूरे देश से भारी संख्या में विरोध पत्र भेजकर रोष जताया जा रहा है।
- 19 जुलाई : भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के नायक मंगल पांडे की जयंती ऑनलाइन मनाई गई।
- 23 जुलाई : अमर शहीद चंद्रशेखर आजाद और बालगंगाधर तिलक की जयंती पर उन्हें भावपूर्ण स्मरण किया गया।
- 26 जुलाई : कारगिल विजय दिवस के अवसर पर भारत की सेना के वीरों को नमन किया गया। जिनके कारण हमें कारगिल विजय मिली।
- 29 जुलाई : भक्तराज अमीचंद्र की पुण्यतिथि पर नमन किया गया।
- 14 अगस्त : हैदराबाद सत्याग्रह बलिदान दिवस आर्यों के लिए विजय दिवस है।

विनम्र श्रद्धांजलि

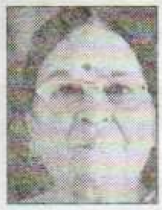

श्रीमती अरुणा सतीजा जी का 7-5-2021 को हृदयगति रुक जाने से निधन हो गया। अरुणा जी, श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक टंकारा की सक्रिय कार्यकर्ता थीं। वे प्रतिवर्ष हजारों रुपये की राशि दान स्वरूप एकत्र कर टंकारा ट्रस्ट को भिजवाती थीं और प्रतिवर्ष ऋषि बोधोत्सव पर टंकारा पधारती थीं। उन्हें टंकारा ट्रस्ट द्वारा टंकाराश्री की उपाधि से अलंकृत किया गया था।

सरल स्वभाव, मिलनसार, वैदिक विद्वान व कर्मठ व्यक्तित्व के धनी आचार्य भवभूति जी का सड़क दुर्घटना में आकस्मिक निधन हो गया। सार्वदेशिक सभा के यशस्वी मंत्री तथा आर्य प्रतिनिधि सभा आंध्र प्रदेश और तेलंगाना के प्रधान प्रो. विट्ठलराव आर्य ने आचार्य भवभूति जी को श्रद्धांजल देते हुए परिवार को आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से एक लाख रुपये देकर आर्थिक सहयोग किया। ऐसे आर्यसमाजी के निधन पर आर्यसमाज, आर्ष गुरुकुल, वानप्रस्थाश्रम नोएडा के सभी सदस्यों, अधिकारियों की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि!!

- 15 अगस्त : स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर ध्वजारोहण के पश्चात ब्रह्मचारियों द्वारा देशभक्ती के गीतों व भाषण का कार्यक्रम आयोजित किया जाएगा। सभी सदस्य सादर आमंत्रित हैं।
- 18 अगस्त : नेताजी सुभाष चंद्र बोस स्मृति दिवस।
- 23 अगस्त : पं. इंद्र विद्यावाचस्पति स्मृति दिवस।
- 23 अगस्त : योगेश्वर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी।
- 29 अगस्त : योगेश्वर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी।
- 29 अगस्त : पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय स्मृति दिवस।

आर्य महिला आश्रम, राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली की प्रधाना श्रीमती आदर्श सहगल का विदाई समारोह

दिल्ली स्थित आर्य महिला आश्रम, राजेन्द्र नगर की संचालिका श्रीमती आदर्श सहगल पिछले कई वर्षों से सुचारु रूप से कार्य कर रहीं थीं। आपके नेतृत्व में आश्रम सफलताओं की ओर अग्रसर हुआ। आपकी मीठी वाणी का प्रभाव सभी को अपनी ओर आकर्षित करता रहा। आप केवल आश्रम के लिए ही नहीं अपितु ऋषि जन्मभूमि टंकारा के लिए भी अपना आर्थिक सहयोग पूर्ण रूप से देती रहीं। पारिवारिक कारणों से और बच्चों का कारोबार इंदौर होने के कारण आप दिल्ली से इंदौर चली गई। आपके विदाई समारोह में महिलाएं विदाई देते हुए भावविभोर हो गईं। आश्रम में आपकी कमी हमेशा खलती रहेगी। आश्रम की महिलाओं ने आपके स्वास्थ्य लाभ एवं दीर्घायु की कामना करते हुए विदाई दी।

सूर्य नमस्कार एवं मुसलमानों की भ्रांति

डॉ. विवेक आर्य

योग दिवस के अवसर पर सूर्य नमस्कार करने का अनेक मुस्लिम संगठनों ने यह कहकर विरोध किया हैं कि इस्लाम में केवल एक अल्लाह की इबादत करने का आदेश है जबकि हिन्दू समाज में तो सूर्य, पेड़, जल, नदी, पर्वत आदि सभी की पूजा का विधान हैं। इसलिए एक मुस्लमान के लिए सूर्य नमस्कार करना नापाक हैं।

यह स्पष्टीकरण सुनकर मुझे आर्यसमाज के प्रसिद्ध भजनोपदेशक स्व. पृथ्वी सिंह बेधड़क का एक भजन स्मरण हो आया जिसमें एक मुस्लिम लड़की एक आर्य लड़की से इस्लाम ग्रहण करना का प्रलोभन यह कहकर देती हैं कि इस्लाम में एक अल्लाह की इबादत करने का बताया गया है तो आर्य लड़की उसे प्रतिउत्तर देती है कि हमारे वेद तो आपके इस्लाम से करोड़ों वर्ष पुराने हैं एवं उसमें विशुद्ध एकेश्वरवाद अर्थात् केवल एक ईश्वर की उपासना का प्रावधान बताया गया हैं जबकि मुसलमानों को यह भ्रांति हैं कि वे केवल एक अल्लाह की इबादत करते हैं क्योंकि उनके तो कलमे में भी एक अल्लाह के अलावा रसूल भी शामिल हैं और बाकी नबी, फरिश्ते, शैतान, जिन्न, बुराक गधे आदि की बारी तो अभी आनी बाकी हैं।

स्वामी दयानन्द द्वारा बताये गए ईश्वर और देवता के अंतर को मुसलमान लोग समझ जाते तो हम वंदे मातरम् नहीं गायेंगे, हम भारत माता कि जय नहीं बोलेंगे, हम सूर्य नमस्कार नहीं करेंगे जैसे अपरिपक्व बयान देकर उन्हें अपने आपको अलग दिखाने की कवायद नहीं करनी पड़ती। ईश्वर को परिभाषित करते हुए स्वामी दयानन्द लिखते है कि जिसको ब्रह्मा, परमात्मादि नामों से कहते हैं, जो सच्चिदानन्दादि लक्षण युक्त है जिसके गुण, कर्म, स्वाभाव पवित्र हैं जो सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनंत, सर्वशक्तिमान, दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्ता, धर्ता, हर्ता, सब जीवों को कर्मानुसार सत्य न्याय से फलदाता आदि लक्षणयुक्त परमेश्वर हैं उसी को मानता हूं। देव शब्द को परिभाषित करते हुए स्वामी दयानन्द लिखते है कि उन्हीं विद्वानों, माता-पिता, आचार्य, अतिथि, न्यायकारी राजा और धर्मात्मा जन, पतिव्रता स्त्री, स्त्रीव्रत पति का सत्कार करना देवपूजा कहलाती है।

निरुक्त 7/15 में यास्काचार्य के अनुसार देव शब्द दा, द्युत और दिवु इस धातु से बनता हैं। इसके अनुसार ज्ञान, प्रकाश, शांति, आनंद तथा सुख देने वाली सब वस्तुओं को देव कहा जा सकता हैं। यजुर्वेद 14/20 में अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र वसु, रुद्र, आदित्य, इंद्र इत्यादि को देव के नाम से पुकारा गया हैं। परन्तु वेदों में तो पूजा के योग्य केवल एक सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, भगवान को ही बताया गया हैं। देव शब्द का प्रयोग सत्यविद्या का प्रकाश करने वाले सत्यनिष्ठ विद्वानों के लिए भी होता हैं क्योंकि वे ज्ञान का दान करते हैं और वस्तुओं के यथार्थ स्वरूप को प्रकाशित करते हैं। देव का प्रयोग जीतने की इच्छा रखने वाले व्यक्तियों विशेषत: वीर, क्षत्रियों, परमेश्वर की स्तुति करने वाले तथा पदार्थों का यथार्थ रूप से वर्णन करने वाले विद्वानों, ज्ञान देकर मनुष्यों को आनंदित करने वाले सच्चे ब्राह्मणों, प्रकाशक, सूर्य, चन्द्र, अग्नि, सत्य व्यवहार करने वाले वैश्यों के लिए भी होता हैं।

स्वामी दयानन्द देव शब्द पर विचार करते हुए ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका वेद विषय विचार अध्याय 4 में लिखते हैं की दान देने से 'देव' नाम पड़ता हैं और दान कहते हैं अपनी चीज दूसरे के अर्थ दे देना। 'दीपन' कहते हैं प्रकाश करने को, 'द्योतन' कहते हैं सत्योपदेश को, इनमें से दान का दाता मुख्य एक ईश्वर ही है की जिसने जगत को सब पदार्थ दे रखे है तथा विद्वान मनुष्य भी विद्यादि पदार्थों के देने वाले होने से देव कहाते है। दीपन अर्थात सब मूर्तिमान द्रव्यों का प्रकाश करने से सूर्यादि लोकों का नाम भी देव हैं। तथा माता-पिता, आचार्य और अतिथि भी पालन, विद्या और सत्योपदेशादी के करने से देव कहाते हैं।

वैसे ही सूर्यादि लोकों का भी जो प्रकाश करने वाला हैं, सो ही ईश्वर सब मनुष्यों को उपासना करने के योग्य इष्टदेव हैं, अन्य कोई नहीं। कठोपनिषद 5/15 का भी प्रमाण हैं की सूर्य, चन्द्रमा, तारे, बिजली और अग्नि ये सब परमेश्वर में प्रकाश नहीं कर सकते, किन्तु इस सबका प्रकाश करने वाला एक वही है क्योंकि परमेश्वर के प्रकाश से ही सूर्य आदि सब जगत प्रकाशित हो रहा हैं। इसमें यह जानना चाहिये की ईश्वर से भिन्न कोई पदार्थ स्वतंत्र प्रकाश करने वाला नहीं हैं, इससे एक परमेश्वर ही मुख्य देव हैं।

सजगता व सावधानी

बच्चों को सुरक्षित रखने का सशक्त तरीका

कोविड की तीसरी लहर की दस्तक से आमजन अभी तक बेफिक्र और लापरवाह हैं, जबकि विशेषज्ञों का मानना है कि तीसरी लहर सबसे घातक विशेषकर बच्चों के लिए बहुत ही खतरनाक हो सकती है। इस विषय पर केंद्रीय आयुष मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली के बोर्ड मेंबर और श्रीनाथ चिकित्सालय भगवत दास घाट सिविल लाइंस कानपुर के मुख्य चिकित्सक डॉ रविंद्र पोरवाल ने बहुत ही ज्ञानवर्धक जानकारी दी है।

बच्चों पर ध्यान दें : विशेषज्ञों का मानना है कि तीसरी लहर का सबसे बुरा असर बच्चों के ऊपर पड़ने की संभावना है क्योंकि अभी तक बच्चों का टीकाकरण का कार्य अपने देश में शुरू नहीं हुआ है, किंतु जिन परिवारों में बड़ों ने टीकाकरण कराया है उन परिवार के बच्चों को संक्रमित होने का खतरा कम माना जा रहा है। विशेषज्ञों का मानना है कि अगस्त के अंतिम सप्ताह और सितम्बर के प्रथम सप्ताह से कोविड की तीसरी लहर नौनिहालों के लिए खतरा बन कर सामने आ सकती है।

छोटे नौनिहालों पर विशेष ध्यान जरूरी : बच्चों को हम 0 से 1 वर्ष, 1 वर्ष से 5 वर्ष और 5 वर्ष से 18 वर्ष की तीन श्रेणियों में बांट सकते हैं।1 वर्ष तक की आयु का नौनिहाल अपनी पीड़ा अपनी तकलीफ अपनी समस्या को बता नहीं सकता केवल उसकी मां और परिजन बीमारी के लक्षणों के आधार पर उसकी सेहत का अंदाजा लगा सकते हैं। एक वर्ष तक के बच्चों की अगर पसली चल रही है, पतले दस्त बार-बार हो रहे हैं, बच्चा दर्द के कारण रोता है और कराह रहा है उसने हाथ पैर चलाना और मुस्कुराना बंद कर दिया है, उसका शरीर का तापक्रम समान्य से ज्यादा बढ़ा हुआ रहता है और खांसी सर्दी जुकाम बना हुआ है तो सतर्क हो जाना चाहिए।

यह आवश्यक नहीं है कि बच्चा कोविड संक्रमित ही हो लेकिन इन लक्षणों को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता और यदि बच्चे ने दूध पीना छोड़ दिया है अनावश्यक रोना व चिल्लाना शुरू कर दिया है। दूध पिलाने के बाद उल्टी कर रहा है और उल्टी में कफ निकल रहा है तो सजग हो जाना चाहिए और चिकित्सकीय परामर्श के बाद बच्चे का समुचित उपचार करना चाहिए।

बाल और तरुण अवस्था में भी सजग रहें : एक वर्ष से अधिक आयु और 5 वर्ष तक के आयु के बच्चे बोलकर इशारे से अपनी तकलीफ और पीड़ा को व्यक्त कर सकते हैं। कोविड के संक्रमण काल में हमें सावधानीवस बच्चों की बातों को ध्यान से सुनना और उनकी नई शुरू हुई एक्टिविटीज को बारीकी से समझना चाहिए। वहीं 5 से 18 वर्ष तक की आयु के बच्चे अपनी पूरी बात को बता सकते हैं अपने दुख कष्ट और तकलीफ को शब्दों में व्यक्त करते हैं।

कोविड के प्रारंभिक लक्षणों स्वाद और गंध का खत्म होना, हड्डी तोड़ बुखार, कमजोरी लगना हाथ पैरों में टूटन होना, सांस लेने में कष्ट और सांस का पूरी तरह फेफड़ों में न पहुंचना, माथे पर कील ठोकने जैसा सिरदर्द,सर्दी, बेहिसाब रात दिन खासी अथवा मुंह का स्वाद कसैला और कड़वा होना आदि लक्षणों में एक दो या अधिक लक्षणों के सामने आते ही परिजनों को यथाशीघ्र उपचार हेतु चिकित्सक से परामर्श का प्रयास करना चाहिए। कोविड के संक्रमण में मृत्यु का एक बड़ा कारण संक्रमित होने के काफी दिनों बाद उपचार के लिए आना माना जाता है इसलिए थोड़ा भी शक होने पर चिकित्सक से परामर्श लेने में लापरवाही व हीला हवाली ना करें।

झूठे अहंकार से बचें

कुछ लोगों का मानना है कि उनके परिवार के किसी सदस्य को करोना हो ही नहीं सकता। उनके बच्चों को संक्रमित होने का कोई चांस नहीं है वह तो पूरी स्वच्छता साफ सफाई मास्क पहनना व अन्य सावधानी रखते हैं। सावधानी और सजगता कोविड से बचाव का प्रभावशाली उपाय है अत्यावश्यक हैं। हमें अपने पढ़े लिखे होने, धनवान होने और सम्मानित प्रतिष्ठित व्यक्ति होने के अहंकार और जिद्द के कारण परिवार के किसी भी सदस्य में संक्रमण के प्रारंभिक एक या दो लक्षण दिखते ही डॉक्टर के परामर्श में देरी न करें और संक्रमण घातक होने से पूर्व उपचार शुरू कर देना बुद्धिमानी है।

सावधानियों पर ध्यान दें

बच्चों की स्वच्छता साफ सफाई पर विशेष ध्यान दें,मास्क बहुत जरूरी है। बहुत आवश्यक होने पर घर से बाहर निकलें। बच्चों को घर पर ही आउटडोर गेम, योग, ध्यान और प्राणायाम उनकी आयु और क्षमता के आधार पर कराएं। विश्राम और निद्रा का विशेष ख्याल रखें। शरीर की रक्षा प्रणाली को सशक्त और मजबूत बनाए रखने के लिए हरी पत्तेदार सब्जियां, ताजे फल, ताजा जूस और सूखे मेवों का यथा आवश्यकता सेवन कराएं लेकिन जंक फूड, फास्ट फूड डिब्बाबंद आहार से बचाव अति आवश्यक है।

ओ३म्

गावः स्वर्गस्य सोपानं गावः स्वर्गेऽपि पूजिताः।
गावः कामदुहो देव्यो नान्यत् किन्चित परं स्मृतम्॥

गौएं स्वर्ग की सीढी होती हैं, गौएं स्वर्ग में भी पूजी जाती हैं, उनसे बढ़कर और कोई श्रेष्ठ वस्तु नहीं है।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

कीर्तिनं श्रवणं दानं दर्शनं चापि पार्थिव।
गवां प्रशस्यते वीर सर्व पापहरं शिवम्॥

गायों के नाम और गुणों का कीर्तन तथा श्रवण करना, गायों का दान देना और उनका दर्शन करना बहुत प्रशंसनीय समझा जाता है और उनसे सम्पूर्ण पापों का नाश तथा परम कल्याण की प्राप्ति होती है।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

ओउम् गां मां हिन्सी। गवो भगो गाव इन्द्रो में॥ वेद

महाकल्याणकारी गौमाता को मत मारो। उनका दूध, गोबर, मूत्र हमारा भाग्य है और ऐश्वर्य है।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

तृणोदकादि संयुक्तं यः प्रद्धात् गवान्हिकम्।
सोऽश्मेधसमं पुण्यं लभते नात्र संशयः॥

जो गौओं को प्रतिदिन जल तृण सहित भोजन प्रदान करता है। उसे अश्वमेध यज्ञ के बराबर का पुण्य प्राप्त होता है। इसमें किंचित मात्र भी संदेह नहीं है।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

यत्र गावस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः।

जहां गौओं की पूजा होती है, वहां देवताओं का वास होता है।

⌘⌘⌘⌘⌘⌘

गाष्च शुश्रुषते यश्च समन्वेति च सर्वशः।
तस्मै तुष्टाः प्रयच्छन्ति वरानापि सुदुर्लभान्॥

जो पुरुष गौओं की सेवा और सब प्रकार से उनका अनुगमन करता है, उस पर संतुष्ट होकर गौएं उसे अतिउत्तम वर प्रदान करती हैं।

घोषणा पत्र संख्या : 153/2016-17 पंजीकरण संख्या : UPMUL/2016/76974 Postal Registration No.- UP/GBD- 249/2020-2022 Date of Dispatch 12 Every Month

हम सबके प्रेरणा पुरुष योगीराज श्रीकृष्ण भी यज्ञ करते थे और मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी भी। आओ हम सब उनका अनुसरण करें।

ध्यान रहे विधिपूर्वक किया गया यज्ञ ही लाभकारी होता है। यदि यज्ञ में घी, समिधा (लकड़ी) और सामग्री का अनुपात ठीक न हो तो लाभ नहीं होगा, हानि की भी सम्भावना है, क्योंकि यज्ञ एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है।

अतः हम सब पर्यावरण शुद्धि के लिए विधिपूर्वक यज्ञ अवश्य करें।

★ यज्ञ करने/करवाने के लिए आचार्य जी की सेवाएं दिल्ली के सभी आर्यसमाज मन्दिरों में उपलब्ध हैं। प्रत्येक आर्यसमाज में दैनिक यज्ञ होता है। साप्ताहिक यज्ञ प्रति रविवार प्रातः 7:30 से 9:30 बजे तक आयोजित होता है आप चाहें तो इसमें भी सम्मिलित हो सकते हैं।

★ हवन सामग्री, समिधा, यज्ञ पात्र, आदि समस्त सामग्री आर्यसमाज मन्दिरों में उपलब्ध हैं।

★ अपने निकटवर्ती आर्यसमाज की स्थिति जानने के लिए Arya Locator मोबाइल एप्प डाउनलोड करें।

★ आप हवन करने के लिए Havan मोबाइल एप्प भी डाउनलोड करके कहीं भी 10, 20, 30 मिनट का यज्ञ कर सकते हैं।

जिस प्रकार पैट्रोल आदि जलकर वायु प्रदूषित करते हैं उसी प्रकार सुगन्धित सामग्री और घी आदि के जलने से वायु शुद्ध होती है। अतः अपने घर में रोजाना यज्ञ-हवन करें - आर्यसमाज का आपसे विनम्र निवेदन है।

मनुष्य जीवन के लिए अत्यावश्यक पर्यावरण शुद्धि हेतु यज्ञ (हवन)

आइए जानें महत्त्वपूर्ण तथ्य

साम्प्रत काल में पर्यावरण प्रदूषण रूपी महाभयंकर भस्मासुर ने मात्र हवा ही नहीं अपितु पानी, पृथ्वी, ध्वनि, प्रकाश, आकाश आदि समस्त महत्त्वपूर्ण संसाधनों को अपने चंगुल में फँसा लिया है। दूषित भौतिक पदार्थों से उत्पन्न अन्न, वनस्पति, शाक, कन्द, मूल, फल, फूल, औषध आदि खाद्य पदार्थ दूषित हो गए हैं। इन दूषित खाद्यान्नों के उपयोग से मनुष्य के शरीर में बनने वाली रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा, वीर्य-रज आदि धातुएँ भी अशुद्ध, निकृष्ट तथा निर्बल बन चुकी हैं। इन तमाम धातुओं, रसों के आधार से काम करने वाले मन, बुद्धि, आत्मा भी दोषयुक्त व विकृत बन गए हैं। परिणाम स्वरूप मनुष्यों के विचार, वाणी तथा व्यवहार दोषयुक्त बन गए हैं। इसका प्रभाव, अन्तिम प्रभाव यह है कि आज व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र, विश्व में परस्पर प्रेम, श्रद्धा, विश्वास, निष्ठा, सद्भाव, संगठन, त्याग, धैर्य, क्षमा, सहनशक्ति, सेवा, दया, निष्कामता की भावना समाप्तप्राय: हो गई है और इससे उलटा परस्पर-स्वार्थ, घृणा, द्वेष, ईर्ष्या, संशय, चिन्ता, विगठन, अन्याय, छल-कपट, असहिष्णुता, क्रूरता, अभिमान, उच्छृंखलता आदि बढ़ रहे हैं।

आओ इन समस्त बुराइयों के मूल कारण पर्यावरण प्रदूषण रूपी महाराक्षस को नष्ट करनेवाले अमोघ शस्त्र यज्ञ (हवन) का प्रयोग करें।

ओ३म् **विश्ववारा संस्कृति** ओ३म्

आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएड़ा (उ.प्र.) दूरभाष : 0120-2505731, 9871798221